भोपाल
गैस
त्रासदी
जनविज्ञान का सवाल

जनविज्ञान का सवाल
JANVIGYAN KA SAWAAL

अध्ययन केन्द्र, एकलव्य शैक्षिक शोध एवं नवाचार संस्थान,
होशंगाबाद (म.प्र.) द्वारा बनाई गई पोस्टर प्रदर्शनी पर आधारित

पहला संस्करण: 1985
कागज़: 70 gsm मेपलिथो एवं 150 gsm पल्प बोर्ड (कवर)
ISBN: 978-81-89976-63-7
मूल्य: .... रुपए

प्रकाशक: **एकलव्य**
ई-10, शंकर नगर बीडीए कॉलोनी,
शिवाजी नगर, भोपाल - 462 016 (म.प्र.)
फोन: (0755) 255 0976, 267 1017 फैक्स: (0755) 255 1108
www.eklavya.in
सम्पादकीय: books@eklavya.in
किताबें मँगवाने के लिए: pitara@eklavya.in

मुद्रक: आदर्श प्राइवेट लिमिटेड, भोपाल, फोन: 255 0291

तू इधर उधर
की
बात न कर,
ये
बता कि
काफिला लुटा
कैसे?

यह त्रासदी बीती हुई घटना मात्र नहीं है,
बल्कि एक जिन्दा सवाल है।

जनविज्ञान का सवाल

अध्ययन केन्द्र
एकलव्य शैक्षिक शोध एवं नवाचार संस्थान,
होशंगाबाद (म.प्र.) द्वारा बनाई गई पोस्टर
प्रदर्शनी पर आधारित

एकलव्य का प्रकाशन

भोपाल की मासूम जनता को शायद किसी रात सोते समय यह पता भी नहीं चलेगा कि कल की सुबह उनके भाग्य में नहीं है. शहर के समीप यूनियन कार्बाइड से विषैली मौत के रूप में न जाने कब रंगहीन गैस फॉसजीन, ऑक्सीजन के साथ उनके भीतर जाकर रक्त को दूषित कर दे और वे निद्रा की मीठी गोद में लेटे-लेटे ही चिरनिद्रा की गोद में स्थानांतरित हो जाएं.

■ [illegible], 30 सितंबर 81

जब हवा ज़हरीली हो जाए तो मौत का हिसाब रखना शायद यमदूत के लिए भी मुश्किल होगा। ऐसे में भोपाल में ज़हरीली गैस के हादसे से कितने लोग मरे इसका सही आँकड़ा कौन बता सकता है। सरकार कह रही है 546 मौतें हुई हैं। विभिन्न सूत्र इस गिनती को एक हज़ार से पाँच हज़ार तक बता रहे हैं। लाशों को समेटने के लिए श्मशान के घेरे छोटे पड़ गए। जो मौत से बच गए और ज़िन्दगी से लड़ रहे हैं उन्हें बड़े-बड़े अस्पतालों में जगह दे पाना मुश्किल हो रहा है। केवल भोपाल ही नहीं, इटारसी, सीहोर, आष्टा, राजगढ़, पिपरिया, सागर, विदिशा, जबलपुर, सोहागपुर, इन्दौर, उज्जैन, देवास सभी जगह अस्पताल ज़हरीली हवा फेफड़े में भर लेने वालों से भर गए हैं। जिसे जो दिशा मिली वह उस तरफ भाग गया। और यह तो थी मनुष्य की बात, पशुओं-पक्षियों में भी जैसे महामारी फैल गई हो। करीब तीन हज़ार पशुओं के मरने का अनुमान है। भोपाल में जनजीवन अभी भी घटना की दहशत से मुक्त नहीं हुआ है। घटना की विकरालता के सन्दर्भ से प्रधानमंत्री श्री राजीव गाँधी अचानक भोपाल आए। उधर अमेरिका में यूनियन कार्बाइड कम्पनी के संचालकों ने दुनिया में उनके ऐसे चारों कारखाने बन्द करने का निर्णय लिया है। शासन डॉक्टर, दवाई सभी कुछ अस्पतालों में भेज रहा है। शासन विभिन्न क्षेत्रों और नगरों में पीड़ितों के लिए हर सम्भव सहायता की कोशिश कर रहा है।

भागो-भागो मौत आ रही है

पाँच सौ से अधिक मरे, दो लाख लोग प्रभावित, चारों तरफ भगदड़
चालीस वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में ज़हर ही ज़हर, राहतें घोषित

हवा में ज़हर, मौत का कहर

मदन मोहन जोशी द्वारा

भोपाल 3 दिसम्बर। यूनियन कार्बाइड के बैरसिया रोड स्थित कारखाने में फॉसजीन गैस की जोखिम का मामला पुराना है और छिटपुट घटनाएँ होती रही थीं, लेकिन किसी को अन्दाज़ा नहीं था कि किसी दिन सारा शहर गैस चेम्बर में बदल जाएगा, सैकड़ों बेकसूरों को लेने कोई कालरात्रि आएगी। कैसी दिखती थी वह ज़हरीली गैस और और कैसी थी उसकी बू - पूछो तो लोग बखान नहीं कर पाते। वह सब कल्पनातीत और वर्णनातीत था।

रविवार की रात खासी ठण्ड थी और राजधानी भोपाल के लोग रज़ाइयों में दुबके थे। आधी रात के एक घण्टे बाद जो जागे, उन्होंने घुटन सी महसूस की। आँखों में चुभन सी हो रही थी। सोमवार की सुबह मनहूस दिन लेकर आई। यूनियन कार्बाइड के कीटनाशक कारखाने के एक टैंक में रिसन होने से मिथाइल आइसोसाइनेट (मिक) नामक ज़हरीली गैस शहर के वायुमण्डल में व्याप गई थी और नींद से जागा शहर यातनाओं के दहखाने में था। सैकड़ों लोग बिस्तर में ही समाधिस्थ हो गए थे। शहर की अनेक बस्तियाँ चीखों से गूँज उठीं, लोग घरों से सुरक्षित स्थानों की ओर बेतहाशा भाग रहे थे। अस्पतालों में मरीज़ों की भर्ती चल रही थी। उनकी आँखें लाल थीं। उन्हें कै हो रही थी। जो शहर छोड़कर भाग सकते थे, वे शहर छोड़कर भागे - बसों से या रेलों से, या जो भी वाहन मिला। सोलह लोगों के मरने से खबर शुरू हुई थी। शाम तक मृतक संख्या का आँकड़ा पाँच सौ को पार कर गया। कोई नहीं जानता कि यह कहाँ जाकर थमेगा, प्रभावित तो हज़ारों हैं। अस्पतालों में दस हज़ार से भी ज़्यादा लोगों का इलाज चल रहा है। इनमें से चार-पाँच सौ ज़िन्दगी और मौत के बीच झूल रहे हैं। जब आदमी कीड़ों की तरह मरे हों तो मवेशियों की कौन कहे। पालतू पशु और सुबह-शाम गाने वाले रंग-बिरंगे पक्षी भी असंख्य मरे हैं। भोपाल की झील स्तब्ध है, और सड़कों-गलियों में मौत के साये मँडरा रहे हैं, मातम है, रुदन है। किसी के सिर से माँ-बाप का साया उठ गया, कोई जीवन-संघर्ष के लिए अकेला रह गया। मानवीय त्रासदी की ऐसी कहानियाँ आने वाले कई दिनों तक सुनने को मिलेंगी। इस देश में शायद ऐसा पहले कभी नहीं और कहीं नहीं हुआ। विश्व के लिए भी यह एक अद्भुत हादसा है, एक मानवीय त्रासदी।

2/3 दिसम्बर की रात - अखबारों में

यह
हाहाकार
यूनियन कार्बाइड के
भोपाल स्थित
कीटनाशक कारखाने
से ज़हरीली गैस
रिसने से
मचा।

उस काली रात को...
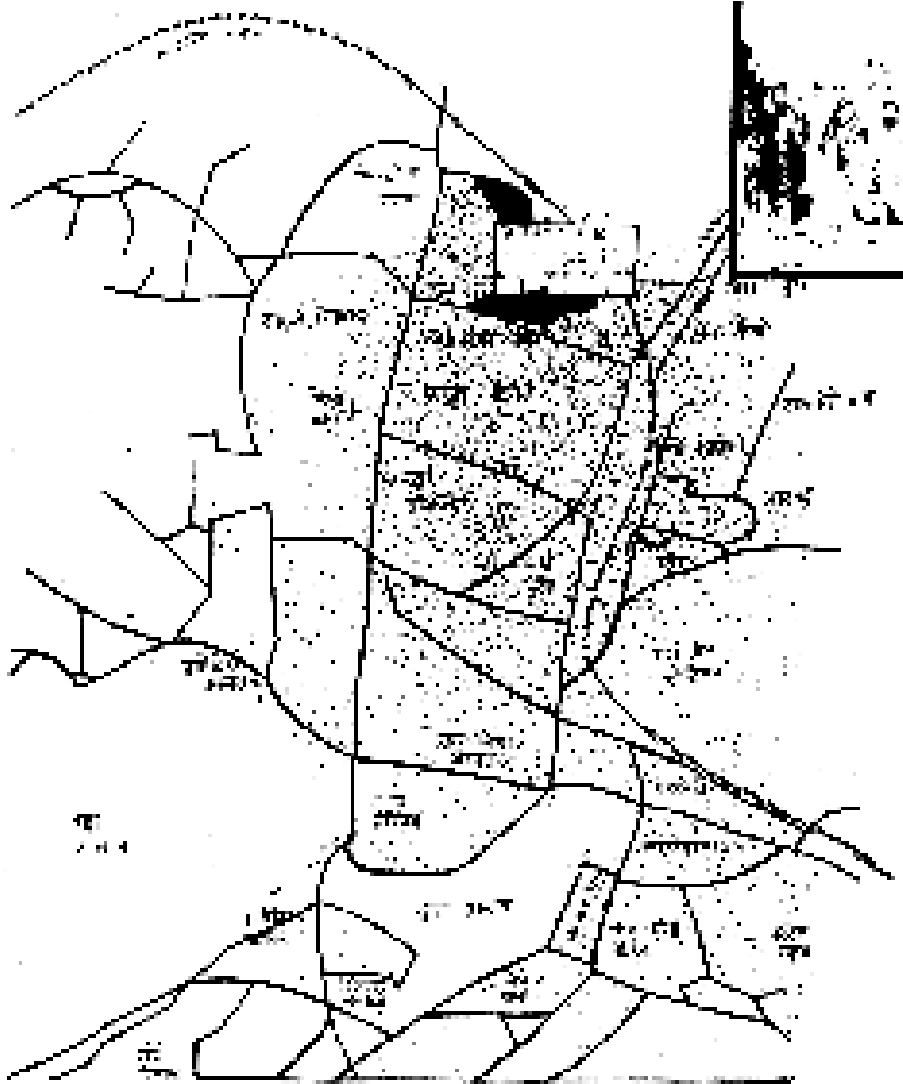
2/3 दिसम्बर 1984

रात 10.30 बजे : दूसरी पाली में मिक प्लान्ट पर तैनात मज़दूरों को पता चला कि टंकी में दबाव बढ़ रहा है।

रात 12:30 बजे : तैनात मज़दूरों ने महसूस किया कि टंकी में दबाव और ताप बहुत अधिक बढ़ गया है।

थोड़ी ही देर बाद टंकी हिलने लगी और गैस टंकी का वॉल्व तोड़कर आसमान में सफेद बादल के रूप में छा गई। यह गैस हवा के साथ-साथ शहर की तरफ 10-12 किलोमीटर तक फैल गई।

चन्द मिनटों में ही लोग खाँसते हुए घरों से निकलकर सड़कों की ओर भागने लगे।

रात 1.15 बजे : खाँसते, उल्टी करते और आँखों पर हाथ रखे लोग अस्पताल पहुँचने लगे।

रात 2.00 बजे : लोग गाड़ियों में भागते-भागते सीहोर तक पहुँचने लगे - (40 किलोमीटर दूर)।

रात 2.30 बजे : अब तक 4000 से ज़्यादा लोग अस्पताल में पहुँच चुके थे। अस्पतालों के डाक्टर भी गैस से प्रभावित होकर बीमार होने लगे।

सुबह 4.00 बजे : 10,000 से ज़्यादा लोग भोपाल से भागकर सीहोर, ओबैदुल्लागंज, होशंगाबाद तथा अन्य शहरों और गाँवों में पहुँच चुके थे।

सैनिकों ने इसी बीच पीड़ित लोगों को ट्रकों में भर-भर कर अस्पतालों तक पहुँचाना शुरू कर दिया था।

सुबह 7.30 बजे : पुलिस और प्रशासन ने राहत कार्य शुरू किया।

सुबह 8.00 बजे : आकाशवाणी समाचार से देश के लोगों को, सारी दुनिया के लोगों को घटना का पता चला।

मरने वालों की संख्या के बारे में अटकलें लगने लगीं।

दोपहर 12.00 बजे : एक बार फिर से भोपाल की सड़कों पर भगदड़ मच गई। अफवाह फैली की गैस का रिसन फिर से होने लगा है।

शाम 5.00 बजे : अस्पतालों में लगभग 20,000 लोग इलाज के लिए पहुँच चुके थे। 500 से ज़्यादा लोग काल के गाल में समा चुके थे। अनगिनत पशु और पक्षी भी मर चुके थे।

और फिर....

4 दिसंबर 1984 : यूनियन कार्बाइड के 5 प्रबन्धकों को गिरफ्तार किया गया तथा कारखाने में ही नज़रबन्द रखा गया। सी.बी.आई. द्वारा जाँच शुरू हुई। यूनियन कार्बाइड सम्बन्धित दस्तावेज़ जब्त कर लिए गए। फैक्टरी पर सील लगा दी गई।

5 दिसम्बर : मृतकों की संख्या एक हज़ार से अधिक।

7 दिसम्बर : यूनियन कार्बाइड (अमेरिका) के अध्यक्ष और यूनियन कार्बाइड (इण्डिया) लिमिटेड के अध्यक्ष तथा प्रबन्ध संचालक गिरफ्तार किए गए तथा यूनियन कार्बाइड के अतिथि गृह में रखे गए। मगर इन्हें गिरफ्तारी के कुछ ही समय बाद रिहा कर दिया गया।

यूनियन कार्बाइड के खिलाफ मुआवज़े के लिए मुकदमा अमेरीका में दायर। इसके पश्चात अनेक अमेरिकी वकील भोपाल के गैस पीड़ितों की तरफ से मुकदमा दायर कर रहे हैं।

10 दिसम्बर : मृतकों की संख्या दो हज़ार से अधिक।

12 दिसम्बर : सरकार ने बची हुई मिक को निष्प्रभावी करने की योजना घोषित की। उसमें कहा गया कि बची हुई मिक से सेविन कीटनाशक बनाई जाएगी। फैक्टरी में पहले से ही सेविन का निर्माण होता रहा था। शासकीय घोषणा में ऐसी किसी नई बात का उल्लेख नहीं था जो सामान्य विधि से अलग हो। लोगों को कहा गया कि इसमें कोई खतरा नहीं है, फिर भी यदि लोग चाहें तो भोपाल छोड़कर जा सकते है। उनके लिए बसों, रेलगाड़ियों का इन्तज़ाम था। इस योजना से एक भारी पलायन शुरू हुआ और अगले 2-3 दिन में भोपाल शहर खाली हो गया। लगभग 2 लाख लोगों ने शहर छोड़ा।

14 दिसम्बर : मृतकों की संख्या तीन हज़ार से अधिक।

16 दिसम्बर : यूनियन कार्बाइड में सेविन बनाना शुरू हुआ और 23 दिसम्बर तक बनता रहा।

30 दिसम्बर : श्रम मंत्री ने मंत्रीमण्डल से इस्तीफा दिया।

1 जनवरी 85 : जैसे-जैसे लोग वापस आने लगे --- इलाज, राहत व पुनर्वास की समस्या लोगों के सामने आने लगी। पीड़ित लोग संघर्ष का रास्ता अपनाने पर मज़बूर हुए। 1 जनवरी को जुलूस निकला और चक्का जाम हुआ।

3 जनवरी : एक विशाल जुलूस निकला और उसके पश्चात ज़हरीली गैस काण्ड संघर्ष मोर्चा की तरफ से धरना शुरू हुआ।

12 जनवरी : रेल रोको आन्दोलन हुआ जिसमें कई लोग गिरफ्तार हुए। इसके साथ-साथ सरकार की तरफ से राहत कार्य भी तेज़ हुआ। गैस पीड़ितों को राशन देने व उनके इलाज की निगरानी के लिए व्यवस्था की घोषणाएँ भी हुईं।

दो माह, तीन माह, 100 दिन! फिर केवल यादें? एक धरना, एक जुलूस, या शायद एक स्मारक!! लेकिन भोपाल की त्रासदी तो जीवित है। लोग अभी भी मर रहे हैं, गर्भवती महिलाओं को आने वाले कल का भय सता रहा है, आँसू अभी भी बह रहे हैं। भोपाल को एक धुँधली यादगार समझकर नहीं छोड़ा जा सकता। यूनियन कार्बाइड को अन्तिम हँसी हँसने नहीं दिया जा सकता...

●●
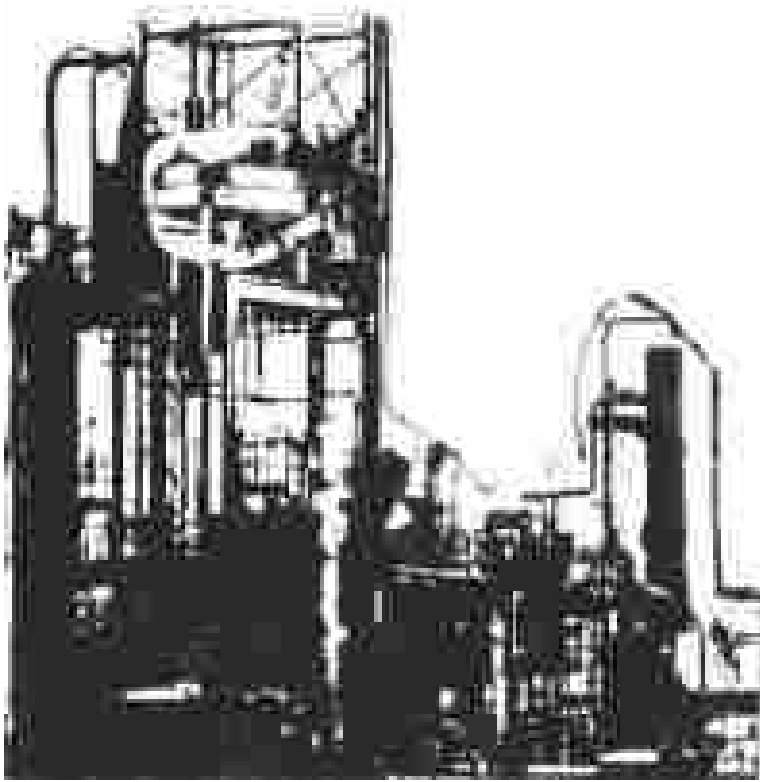
क्या इस कारखाने में दुर्घटना पहली बार हुई ?

नहीं ! ! !

मिथाइल आइसोसाइनेट (मिक) प्लान्ट का निर्माण 1977 में शुरू हुआ और 1980 में यह प्लान्ट काम करने लगा। इस प्लान्ट के चालू होते ही आए दिन दुर्घटनाएँ होने लगीं। अनगिनत ऐसी दुर्घटनाएँ हुईं जिनको दबा दिया गया।

"रपट" -- अक्तूबर 1982

"मंगलवार का वह दिन जब रात के अँधेरों में घिरकर बुधवार की शक्ल में तब्दील हो रहा था तभी अचानक बैरसिया रोड स्थित यूनियन कार्बाइड के एम.आइ.सी. प्लान्ट में कार्यरत ट्रेनी ऑपरेटर वाडेकर द्वारा वॉल्व खोलते ही पाइप लाइनों को जोड़ने वाला फ्लेंज एक धमाके के साथ फूट पड़ा और ज़हरीली मिथाइल आइसोसाइनेट, फ्लेंज से लावे की तरह उबल पड़ी। प्लान्ट पर काम कर रहे मज़दूर अपनी-अपनी जान बचाने की बदहवासी में बाहर की तरफ भागने लगे और खतरे की सूचना देने के लिए काँच फोड़ दिया गया। अँधेरे में खामोशी से अपना वक्त काटती वह रात इस अपशगुनी सायरन की मनहूस आवाज़ से अचानक कत्ल की रात में बदल गई।

सायरन के बजते ही सारी फैक्टरी के मज़दूर अपने-अपने काम छोड़कर फैक्टरी से दूर निकल जाने को भागने लगे। एक तरफ तो कार्बाइड के अन्दर यह सब हो रहा था और दूसरी तरफ हवा का तेज़ बहाव न होने के बावजूद मिथाइल ने माहौल में घुलकर अपना रंग दिखाना शुरू कर दिया। जिसके नतीजे में आस-पास के इलाके, ग्रीन पार्क कॉलोनी तथा छोला रोड व पास ही बनी झुग्गियों के लोगों को, जो गहरी नींद सो रहे थे, गैस के प्रभाव से साँस लेने में तकलीफ सी होने लगी और सायरन की आवाज़ से वे घबराकर उठ बैठे। वातावरण में फैले इस ज़हर के खतरे से वाकिफ हो चुके लोग उस वक्त शहर की तरफ भागने लगे जब उनकी आँखों से आँसू निकलने लगे और साँस लेना दूभर हो गया। रात का वह सन्नाटा आहो-ज़ार और चीखो-पुकार में बदल गया। सर पर खड़ी मौत को भाँपकर लोग अपने-अपने बच्चों को गोद में ले-लेकर अपनी पूरी ताकत से शहर की तरफ बचाव की उम्मीद में दौड़ पड़े।

यह सब उस समय हुआ जबकि उक्त प्लान्ट के वॉल्व को पाँच-दस मिनट में ही

सुपरवाइज़र श्री वी.एन अग्रवाल ने, आवश्यक मास्क धारण कर, बन्द कर दिया था, हालाँकि इस काम में वे खुद भी बुरी तरह घायल हो गए। उनके गालों की चमड़ी बुरी तरह जल गई तथा शरीर के अनेक हिस्से भी मिक से झुलस गए। रात के 1 बजकर 10 मिनट पर हुई इस दुर्घटना का असर सारे इलाके पर सुबह साढ़े छह बजे तक रहा। आसपास के इलाकों से भागे हुए लोग सुबह ही वापस लौट पाए। लगभग चार बजे पुलिस भी घटना स्थल पर पहुँच गई और दुर्घटनाग्रस्त लोगों के बयान दर्ज करने चाहे लेकिन प्लान्ट सुपरिन्टेण्डेंट गोपालन ने बयान देकर तथ्य छिपा लिए। सबसे बड़ी बात तो यह है कि मिथाइल एक्सपोज़र हो जाने की हालत में दुर्घटनाग्रस्त लोगों को 48 घण्टे तक मेडिकल निगरानी में रखा जाना आवश्यक है। लेकिन साप्ताहिक अखबार "रपट" में पर्दाफाश होने के बाद कम्पनी के डरे हुए अधिकारियों ने घटना को दबाए रखने के लिए न तो प्रभावितों को चिकित्सा कि लिए हमीदिया अस्पताल भेजा न कहीं और, बल्कि वहीं उन्हें सुबह तक बिठाए रखा, और बिना किसी चिकित्सा के घर भेज दिया। और आज रोटी की मजबूरी में फँसे चारों लोग चुप हैं।"

- 26 दिसम्बर 1981 को प्लान्ट पर काम करते समय मोहम्मद अशरफ फॉसजीन गैस लीक हो जाने के कारण मारा गया।
- 15 दिन बाद, जब अमेरिका से आए विशेषज्ञ भी मौजूद थे, अचानक एक बार फिर फॉसजीन लीक हो जाने के कारण मौत के झूले में झूलते 24 लोगों को अस्पताल पहुँचाया गया और कई माह तक आशा-निराशा के बीच तड़पते मज़दूर तरसती निगाहों से ज़िन्दगी की ओर देखते रहे।
- फरवरी 1982 में 18 श्रमिक फॉसजीन गैस के कारण गम्भीर रूप से घायल हुए थे और उन्हें हमीदिया अस्पताल में भरती किया गया।
- अप्रैल 1982 में जी.डब्लू.ए. खान और एम.एस. खान को गम्भीर चोट लगी तथा इसी दिनाँक को फॉसजीन दुर्घटना में एक कर्मचारी एस.ए. वाडेकर गम्भीर रूप से घायल हो गया।

पत्रकार की चेतावनी

"यह MIC प्लान्ट वस्तुतः अमेरिका के एक निर्जन इलाके में स्थापित किया गया था, लेकिन वक्त के साथ बढ़ती आबादी तथा कारखाने में आए दिन होने वाली मौतों ने अमेरिका सरकार को मजबूर कर दिया कि इसे वहाँ से निष्कासित करे। ऐसे समय में जब तलाश की गई तो किसी भी देश ने इस प्लान्ट को अनुमति देने से इन्कार कर दिया। लेकिन अपनी शानदार परम्पराओं के अनुसार भारत सरकार ने इन्कार नहीं किया और अचानक काल का यह क्रूर पंजा भोपाल के गले पड़ गया।"

17 सितम्बर 1982

"इस कारखाने के आस-पास कई गाँव हैं, कई कॉलोनियाँ हैं। जिनमें रहने वाले लोग आए दिन अनजानी बीमारियों के शिकार होकर डॉक्टरों की चौखटों पर दम तोड़ रहे हैं। खेतों में खड़ी लहलहाती फसलें भी अचानक पता नहीं क्यों कभी-कभी मुरझा जाती हैं, शायद उनमें महसूस करने की ताकत ज़्यादा है।"

17 सितम्बर 1982

"मानवीयता के विरुद्ध एक घृणित षड़यंत्र चल रहा है। अपनी-अपनी धुन में डूबे लोग बेखबर से हैं। जिनको खबर है वे चुप हैं। मौत दबे पाँव आगे बढ़ती आ रही है। भोपाल सो रहा है, फिलहाल अगली सुबह तक के लिए और किसी दिन शायद बिना अगली सुबह को जागने के लिए।"

1 अक्तूबर 1982

"इस घृणित अमानवीय षड़यंत्र का नतीजा आखिर एक दिन अवश्य सामने आएगा, लेकिन तब तक शायद बहुत देर हो चुकी होगी। शायद कई हज़ार लोग अशरफ की तरह मारे जाएँ। कई हज़ार बाबूलाल चकोले की तरह अपने सीनों पर यूनियन कार्बाइड के ज़ख्म ढोते हुए ज़िन्दा रहें, क्योंकि अमेरिकी जाल में फँसे हुए लोग इसके विरुद्ध कोई कदम उठाने को तैयार नहीं हैं।"

8 अक्तूबर 1982

"ये शिकायतें मेरी निजी नहीं, बल्कि सामाजिक पीड़ा से उपजी शिकायतें हैं।"
राजकुमार केसवानी

एक पत्रः मुख्यमंत्री को .... 15 अक्तूबर 1982

आदरणीय महोदय,

यह खत मेरी बहुत सारी शिकायतों को ढोकर आप तक पहुँच रहा है। ये शिकायतें मेरी निजी नहीं, बल्कि सामाजिक पीड़ा से उपजी शिकायतें हैं।

इस पत्र के साथ में साप्ताहिक अखबार "रपट" के तीन अंकों की प्रतियाँ भेज रहा हूँ। इन अंकों में मुख्य मुद्दे हैं --- यूनियन कार्बाइड की इस शहर को मौत की धमकी और गवर्नमेंट प्रेस के मशीनों और फाइलों के बीच दबी "मोनो कास्टर" सेक्शन के मज़दूरों की सिसकियाँ। बाकी खबरें भ्रष्टाचार से सम्बन्धित हैं, जिनको मैं दूसरा स्थान देता हूँ।

यह पत्र लिखने का कारण मात्र इतना है कि जब आप नामदेव ढसाल की सामाजिक पीड़ा से उपजे क्रोध को सन्दर्भों में देखते हैं और जायज़ मानते हैं तो मेरे आक्रोश को भी आप यकीनन सन्दर्भों से परे हटाकर नहीं देखेंगे। मेरी गुज़ारिश है आपसे, यकीन जानिए यह शहर भोपाल खतरे में है, इसे बचा लीजिए। इस दीवाने की बात मानकर तहकीकात तो करवाइए, आपको भी यकीन हो जाएगा।

मैं अपने लिखे और अपने अखबार की वकत बहुत अच्छी तरह जानता हूँ। कोई क्रान्ति नहीं आ जाएगी, किसी का तख्ता नहीं पलट जाएगा, लेकिन क्या महज़ इसी वजह से मैं चुप रहूँ? क्या यह सोचकर कि मेरी इस कोशिश को पीत पत्रकारिता का नाम दिया जा सकता है, मैं अन्धा बन जाऊँ? नहीं, मैं हिम्मत नहीं हारूँगा, लड़ूँगा और इस दृढ़ निश्चय के साथ कि इस शहर को हिटलर का गैस चेम्बर नहीं बनने दूँगा।

बहुत सारी बातें, बहुत सारी, लेकिन मन में इस वक्त एक ही बात है कि एक बार आप सचमुच यह झाँककर ही, देख तो लें, इस शहर भोपाल के चलते-फिरते इन्सानों के खिलाफ मौत क्या मंसूबे बाँध रही है?

मैं जानता हूँ, जवाब आएगा।

अपनी धुन में

कार्बाइड की प्रबल भाग्य रेखा...

सावधान........ दुर्घटना........ दुर्घटना........ बचाओ........ बचाओ

ज़हरीली गैस से हज़ारों मज़दूरों एवं लाखों नगरवासियों का जीवन खतरे में
कारखाने में दुर्घटनाओं की बाढ़, सुरक्षा साधनों का अभाव,
सैकड़ों युवक नौकरी से बाहर श्रम कानून बलाए ताख!

-: म.प्र. शासन से न्याय एवं कारगर कार्यवाही की अपील :-

"तेरे ज़र्फ से वाकिफ है सारा जहाँ, कौन जानता नहीं तेरी हर दास्ताँ"

❁ यूनियन कार्बाइड के तीन काम ❁

✤ ज़ुल्म, ज़्यादती और इन्तकाम ✤

1. दुर्घटनाओं की रोकथाम की जाए।
2. ठेकेदारी प्रथा बन्द की जाए तथा उनके मज़दूरों को स्थाई किया जाए।
3. मेडिकल के नाम पर निकाले गए मज़दूरों को काम दिया जाए।
4. श्रमिकों का शोषण बन्द किया जाए।
5. श्रम कानूनों का पालन किया जाए, आदि।

1967-68 में जब यूनियन कार्बाइड की स्थापना की गई, तब यह स्थान नगर-निगम क्षेत्र के बाहर था। धीरे-धीरे यह इलाका नगर निगम सीमा क्षेत्र में आ गया और सन् 1975 में तत्कालीन नगर निगम प्रशासक श्री महेश नीलकण्ठ बुच द्वारा कार्बाइड को नोटिस दिया गया कि यह क्षेत्र अब निगम सीमा क्षेत्र में आ चुका है, अतः कारखाने को शीघ्र ही सीमा से बाहर ले जाया जाए। कार्बाइड की प्रबल भाग्य रेखा के कारण इससे पहले कि बुच साहब कुछ कह पाते वे यहाँ से स्थानान्तरित हो गए और यह प्रकरण दब सा गया। और साथ ही एक सौदेबाज़ी के तहत कार्बाइड के तत्कालीन महाप्रबन्धक श्री सी.एस. राम द्वारा नगर निगम को वर्द्धमान पार्क के निर्माण हेतु 25 हज़ार रुपए का चन्दा दिया गया। इस तरह वह नोटिस पूरी तरह ठण्डे बस्ते में चला गया।

("रपट" से)

मज़दूर संघ ने भी आन्दोलन छेड़ा ...

1982 में हुई दुर्घटना के बाद कारखाने के मज़दूर संघ ने सुरक्षा समस्याओं को लेकर आन्दोलन छेड़ा। उन्होंने आसपास बसे लोगों और सरकार तक को कारखाने के खतरों के बारे में सूचित किया।

इस आन्दोलन के कारण कई मज़दूरों को नौकरी से निकाल दिया गया। मज़दूर संघ से प्राप्त तथ्यों के आधार पर ही बाद में स्थानीय पत्रकार श्री राजकुमार केसवानी ने "रपट" (साप्ताहिक), "प्रचण्ड" (साप्ताहिक) एवं "जनसत्ता" (दैनिक) में इस सम्बन्ध में लगातार चेतावनी भरे लेख लिखे।

जब विधान सभा में सवाल हुआ......

श्री महेन्द्र वर्मा : अध्यक्ष महोदय, इस कारखाने के कारण ज़हरीली गैस वहाँ के आसपास के एरिये को प्रभावित कर रही है। तो क्या माननीय मंत्री जी उसके कुप्रभाव को देखते हुए उस कारखाने को कहीं अन्यत्र ले जाकर स्थापित करने की कार्यवाही करेंगे?

श्री तारासिंह वियोगी : श्रममंत्री
अध्यक्ष महोदय, यह कारखाना सन् 1969 में स्थापित हुआ है और 25 करोड़ की लागत लगी है। यह कोई छोटा-सा पत्थर नहीं है कि इसको उठाकर किसी दूसरी जगह रख दूँ। इसका पूरे देश से सम्बन्ध है। ऐसा भी नहीं है कि भोपाल को इससे कोई बहुत बड़ा खतरा पैदा हो गया है। ऐसी कोई सम्भावना नहीं है।

21 दिसम्बर, 1982

मिक गैस की चपेट में शरीर

❑ शरीर में मिक तीन तरीकों से पहुँचती है - साँस द्वारा, मुँह से या त्वचा को भेदकर। इसलिए अन्य गैसों की अपेक्षा मिक अधिक घातक है।

❑ मिक का शरीर पर असर इस बात पर निर्भर करता है कि हवा में उसकी मात्रा क्या है। जब भोपाल की हवा में 40 टन मिक घुलकर फैला तब लोगों पर जो असर हुआ वह कुछ इस प्रकार से था:

❑ **आँखों में**: असहनीय जलन मानो किसी ने उनमें मिर्ची झोंक दी हो। साथ ही खूब आँसू बहने लगे और सब कुछ धुँधला-सा दिखाई देने लगा। मिक आँखों की पतली त्वचा को जला देती है और यही इन सब का कारण है। आँखों के घाव अब धीरे-धीरे भर गए हैं। पर कुछ लोग अन्धे भी हो गए हैं। लम्बे इलाज के बाद भी लोगों की आँखें पूर्णतः ठीक नहीं हुई हैं। धुँधला दिखने व टकटकी लगाकर देखने पर आँसू आ जाने की शिकायतें अभी भी हैं।

❑ **श्वास नली और फेफड़ों में**: अधिक मिक सूँघने पर जलन और दम घुटना। साथ ही सीने में दर्द व खाँसी भी होने लगी। घुटन के कारण लोग मरने लगे या फिर बेहोश होकर गिर गए। गैस पीड़ितों को अभी भी खाँसी, दमा, साँस फूलना, छाती में दर्द, आदि की शिकायतें हैं। साँस लेने की क्षमता में कमी आ जाने से वे काम करने में असमर्थ हो गए हैं। थोड़ा काम करने से ही थक जाते हैं और साँस फूल जाती है।

❑ **पाचन तंत्र:** घुटन महसूस होने पर लोग मुँह से साँस लेने लगे। इससे गैस पेट में पहुँची और उससे जलन, दर्द व उल्टी होने लगी। साथ ही मूत्राशय व बड़ी आँत पर असर होने से मूत्र और मल का नियंत्रण नहीं रहा। दस्त व पेट की अन्य तकलीफों से लोग अभी भी परेशान हैं।

❑ **त्वचा:** गैस या द्रव जब त्वचा के सम्पर्क में आती है तो उसको जला देती है। त्वचा को भेदकर गैस खून तक पहुँच जाती है और असर करती है।

✦ **गैस प्रभावितों की आधुनिक वैज्ञानिक जाँच और उसके अनुसार प्रभावी इलाज ढूँढना**
✦ **लोगों को सही एवं सम्पूर्ण इलाज दिलाने के लिए उचित चिकित्सा व्यवस्था करना।**

इसके लिए क्या अध्ययन और प्रयास किए जा रहे हैं?

मिक सूँघने से ऐसा क्यों हुआ?

मिक की विशेषता यह है कि वह हमारे शरीर के प्रोटीन के साथ क्रिया करती है, कोशिकाओं की दीवारों को नष्ट कर देती है तथा कोशिका द्रव को बाहर खींच लाती है। इस क्रिया से फेफड़ों और श्वास नली की अन्दर की सतह गल जाती है। श्वास नली में अधिक कफ पैदा हो जाती है। फेफड़ों में द्रव भर जाता है और वे काम नहीं कर पाते। इसे पल्मोनरी इडीमा कहते हैं और इससे मौत भी हो सकती है। इस कारण शरीर को प्राणवायु (ऑक्सीजन) कम मात्रा में प्राप्त होती है। अपर्याप्त ऑक्सीजन होने से शरीर के विभिन्न अंगों पर असर होता है। केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र (जिससे पूरे शरीर का संचालन होता है) शिथिल हो सकता है और हृदय धड़कना बन्द कर सकता है।

मिक की रासायनिक क्रिया से शरीर के कई आवश्यक रसायन एवं जीवाणु प्रभावित होते हैं। एसीटाइल कोलीन एस्ट्रेस एक विशेष एन्ज़ाइम है जिसका मस्तिष्क से शरीर के विभिन्न अंगों को सन्देश भेजकर सक्रिय करने में विशेष योगदान है। मिक के असर से यह एन्ज़ाइम निष्प्रभावी हो जाता है। इससे शरीर के कई अंग विकृत रूप से काम करने लगते हैं और पेट, आँख, गले आदि की कई तकलीफें इस कारण से होती हैं।
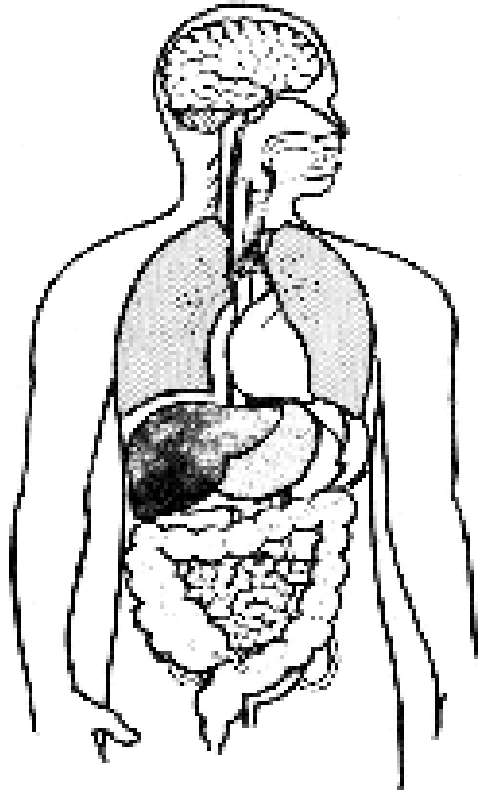
मिक ने खून पर भी अपना असर दिखाया है। खून में साइनाइड होने की खबरें मिली हैं। कुछ शवों की जाँच से यह भी पता लगा है कि खून में यूरिया की मात्रा बढ़ गई और कुछ ऐसे मामले भी सामने आए जिनमें खून धमनियों और हृदय में जम गया जिससे खून का दौरा बन्द हो गया। कई शवों में हृदय में खून का नामोनिशान ही न रहा।

शरीर में पैदा हुए ज़हरीले रसायनों की सफाई जिगर (यकृत) व गुर्दों के माध्यम से होती है। परन्तु मिक की क्रिया से पैदा हुए ज़हरीले पदार्थों की मात्रा अधिक होने से जिगर और गुर्दे भी खराब हो सकते हैं।

खतरा दूरगामी प्रभावों का

मिक की क्रियाओं से शरीर में छूटे रसायनों के भी बुरे प्रभाव होने का अन्देशा है। कुछ रसायन ऐसे हैं जिनसे कैंसर होने की आशंका है। कुछ रसायनों से आनुवंशिकीय प्रभाव का डर है जिससे अगली पीढ़ी के बच्चों पर कुप्रभाव हो सकते हैं।

गैस के कुछ असर तो शायद गैस पीड़ितों को ज़िन्दगी भर सहन करने पड़ेंगे। उनके शरीर इतने कमज़ोर पड़ गए हैं कि अब निमोनिया, दमा, टी.बी. आदि बीमारियाँ उनको आसानी से घेर सकती हैं।

एक अहम सवाल...

2-3 दिसम्बर की रात पहले मरीज़ों के गिरते-पड़ते हमीदिया अस्पताल पहुँचने पर वहाँ के डॉक्टरों ने जब यूनियन कार्बाइड के डॉक्टर से फोन पर गैस के बारे में पूछा तो वे बोले - “गैस ज़हरीली नहीं है!” अगले दिन सुबह भी वे बोले कि मिक से थोड़ी परेशानी होगी पर वह घातक नहीं हैं!! और उस समय भी कई लोग दम तोड़ रहे थे। पर क्या आप जानते हैं कि यूनियन कार्बाइड की अपनी ही सुरक्षा पुस्तिका में स्पष्ट लिखा है कि मिक एक ऐसा घातक रसायन है कि तुरन्त इलाज के बावजूद भी उससे हुए नुकसान से बचा नहीं जा सकता?

वैज्ञानिक जाँच और इलाज....

इसीलिए ज़रूरत है सम्पूर्ण वैज्ञानिक जाँच की और उसके अनुसार कारगर इलाज की। इस ज़हर का असर जड़ से काटने की दवा दुनिया भर में पता नहीं है। आश्चर्य की बात यह है कि यूनियन कार्बाइड ऐसा रसायन इतनी बड़ी मात्रा में बनाता रहा परन्तु उनकी करोड़ों रुपयों की प्रयोगशाला में उसकी दवा ढूँढने के कोई प्रयास नहीं हुए।

इस स्थिति में डॉक्टर क्या इलाज कर रहे हैं? मरीज़ों की तकलीफों में लक्षण जैसे खाँसी, आँखों में जलन, उल्टी... का इलाज उनकी आम दवाएँ देकर किया जा रहा है। पर क्या यह काफी है?

आने वाले समय में यदि लोगों को मरने से बचाना है और उन्हें स्वस्थ करना है तो ज़रूरत है...

महिलाओं पर विशेष असर....

गैस प्रभावित महिलाओं की माहवारी में खून का बहाव सामान्य से अधिक हो गया है और पीठ में दर्द की भी शिकायत है। गैस के असर से कई गर्भवती महिलाओं के गर्भ गिर गए। शिशु के गर्भ में शिथिल हो जाने और मृत पैदा होने के मामले भी सामने आए हैं। आशंका यह भी है कि गर्भ में शिशु के दिमाग या अन्य अंगों पर असर हो सकता है।

मिक के घिरे...
हवा पानी पेड़ पौधे

- पत्तियाँ झड़ीं, झुलसीं, पर पेड़ नहीं मरे। नए अंकुर फूटे हैं पर मिक की इतनी भारी चपेट अन्दर तक असर कर नस्ल भी बिगाड़ सकती है। यानी आनुवंशिक असर - म्यूटाजेनेसिस।
- कैंसर फैलाने वाले रसायन पानी और पौधों में पाए जा सकते हैं - कार्सिनोजेनेसिस।

घबराई हुई जनता को वैज्ञानिकों से सही जानकारी की अपेक्षा थी पर वैज्ञानिकों के कथन भ्रम में डालने वाले थे।

- पानी साफ है पर उबालकर पियो।
- सब्ज़ी ठीक है मगर धोकर पकाओ।
- मिक का पर्यावरण पर दूरगामी असर नहीं होगा।

इन कथनों के आधार क्या थे? क्या वैज्ञानिकों के पास भी सही जानकारी नहीं थी?

अगर नहीं थी, तो उन्होंने इस बात को कबूल क्यों नहीं किया?
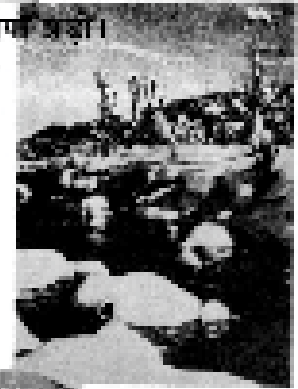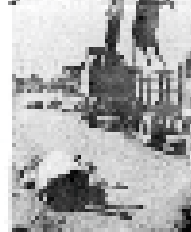
और
पीछे रह गए हैं...

यूनियन कार्बाइड के आसपास की बस्तियों में रहने वाले अधिकांश मज़दूर, हम्माल, ठेलेवाले जैसे गरीब मेहनतकश परिवार हैं। सैकड़ों परिवारों के कमाने वाले सदस्य गैस का शिकार हो गए। बहुत से ऐसे परिवार हैं जिनमें केवल विधवा, बूढ़े या छोटे बच्चे ही बचे हैं। इन बेसहारा विधवाओं, बूढ़ों व अनाथ बच्चों की समस्या एक प्रचण्ड सामाजिक समस्या के रूप में उभर आई है। यही नहीं, गैस से पीड़ित अधिकांश व्यक्ति कोई काम नहीं कर पाते हैं। थोड़ी सी मेहनत करने पर साँस फूलने और सीने में दर्द आदि होने लगता है। माँसपेशियों के विकार के कारण लोग काम करने पर बहुत ही जल्दी कमज़ोरी महसूस करने लगते हैं। अब वे रोज़ी-रोटी के लिए क्या करेंगे? देखा गया है कि वे धीरे-धीरे साहूकारों के शिकंजों में फँसते जा रहे हैं। सवाल यह उठता है कि इन्हें किस प्रकार की राहत दी जाना चाहिए तथा उनके लिए किस प्रकार की पुनर्वास योजनाओं को लागू किया जाना चाहिए। इसमें दो मत नहीं हैं कि यूनियन कार्बाइड से उन्हें मुआवज़ा मिलना चाहिए। मगर यह पता नहीं है कि वह कब मिलेगा। तब तक वे क्या करेंगे? सरकार की तरफ से राशन आदि दिया जा रहा है... यह भी सब पीड़ितों तक नहीं पहुँच रहा है — मगर यह भी कब तक? अभी तक सरकार की तरफ से कोई पुनर्वास योजना घोषित नहीं की गई है। और साथ-साथ यूनियन कार्बाइड अपनी ज़िम्मेदारी को नहीं निभा रहा है।

जानलेवा गैस

कल्पना कीजिए कि आप एक 60 घन मीटर (4 मीटर x 5 मीटर x 3 मीटर) कमरे में बन्द हैं और उसमें सामान्य हवा है।

यदि कमरे में मिक गैस कि 1.25 लीटर मात्रा छोड़ दी जाए (यानी हवा के 10 लाख भागों में 20 भाग मिक) तो आप आँख, नाक और गले में असहनीय जलन महसूस करेंगे।

मिकः कुछ जानकारी

नामः मिथाइल आइसोसाइनेट (MIC - मिक)
रंगः रंगहीन
गन्धः असहनीय मीठी तीखी
उबलांकः द्रव 39.1 सेल्सियस पर उबलकर गैस बन जाती है
घनत्वः हवा से भारी (20 सेल्सियस पर 0.96)
रासायनिक सूत्रः CH_3NCO

मिकः तीसरे महायुद्ध में?

मिक का प्रभाव मनुष्यों पर क्या होता है, दुनिया में इसका सबसे बड़ा "प्रयोग" भोपाल में हुआ है। अभी तक प्रयोगशाला में मिक के प्रभाव के प्रयोग चूहों पर ही होते थे। भोपाल ने तो जानवरों की जगह "मानव चूहे" प्रयोग के लिए उपलब्ध करा दिए। यह कहा जा रहा है कि रसायन और जैविक युद्ध के बहुत से विशेषज्ञ मनुष्य पर मिक के प्रभाव के अध्ययन हेतु भोपाल आए। ये महानुभाव यह अध्ययन करते हैं कि क्लोरीन, फॉसजीन, साइनो गैस..... इत्यादि गैसों का उपयोग युद्ध में मनुष्यों को मारने के लिए कैसे किया जा सकता है। शायद आने वाले युद्धों में मिक के उपयोग पर उनकी आँख है।

मिक प्लान्ट में प्रतिदिन आठ घण्टे काम करने वाले मज़दूर सारे समय रिसती हुई गैस सूँघते रहते हैं। मिक इतनी घातक गैस है कि अगर हवा के 10 लाख भागों में 0.02 भाग (वैज्ञानिक इसे 0.02 ppm अर्थात पार्टस प्रति मिलियन कहते हैं) से ज़्यादा हो तो इन मज़दूरों के स्वास्थ्य पर दूरगामी बुरा असर पड़ सकता है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्य सुरक्षा मानकों के अनुसार इस हवा को प्रदूषित माना जाएगा और फैक्टरी में ऐसी स्थिति कभी पैदा नहीं होनी चाहिए। इस सुरक्षा मानक को वैज्ञानिक TLV- *थ्रेशहोल्ड लिमिट वेल्यू* - अर्थात् सुरक्षा की *अधिकतम सीमा मान* कहते हैं।

मिक अन्य रसायनों की अपेक्षा अधिक क्रियाशील है। यह अम्लीय और क्षारीय दोनों तरह के रसायनों से तीव्रता से क्रिया करती है। पानी के साथ भी क्रिया करके मिथाइल अमीन और कार्बन डाइऑक्साइड बनाती है। इस क्रिया में ऊष्मा उत्पन्न होती है।

मिक कितनी घातक?

हवा के 10 लाख भागों में जब केवल 5 भाग मिक मिलाकर चूहों पर प्रयोग किया गया तो 4 घण्टे के भीतर ही लगभग आधे चूहे मर गए।

चार आदमियों को जब 5 मिनट तक हवा मे अलग-अलग मात्रा में मिक मिलाकर सुँघाई गई तो निम्न परिणाम आएः

हवा के 10 लाख भागों में 0.4 भाग मिकः कोई प्रभाव नहीं
" 2.0 " : आँसू बहने लगे। नाक और गले में जलन होने लगी।
" 4.0 " : अधिक जलन
" 21.0 " : आँख, नाक व गले में असहनीय जलन। (मृत्यु की सम्भावना)

भोपाल में ज़हर ऐसे बनता है.....

1. कार्बन मोनोऑक्साइड प्लान्ट

एक विशेष प्रकार के कोयले को ऑक्सीजन की उपस्थिति में जलाया जाता है। इससे कार्बन मोनोऑक्साइड और थोड़ी सी कार्बन डाइऑक्साइड बनती है। कार्बन डाइऑक्साइड को पानी में घोलकर अलग किया जाता है।

2. फॉसजीन प्लान्ट

इस कार्बन मोनोऑक्साइड की क्लोरीन के साथ क्रिया करवाई जाती है। इस क्रिया में गैसें एक्टीवेटिड कार्बन पर से गुज़रती हैं। इस क्रिया से फॉस्जीन का उत्पादन होता है।

3. मिथाइल आइसोसाइनेट प्लान्ट

फॉसजीन की मोनोमिथाइल अमीन के क्रिया करवाकर मिथाइल आइसोसाइनेट का उत्पादन होता है। इन दोनों को घोलने के लिए क्लोरोफॉर्म का उपयोग किया जाता है। इस प्रक्रिया में हाइड्रोक्लोरिक अम्ल भी बनता है जिसे रिफाइनरी में अलग करना पड़ता है। कुछ फॉसजीन भी, बिना रासायनिक क्रिया में भाग लिए, बच जाती है। इसको भी निकाला जाता है और मिथाइल आइसोसाइनेट में केवल 0.02 प्रतिशत फॉसजीन रहने दिया जाता है।

4. सेविन प्लान्ट

मिथाइल आइसोसाइनेट को अल्फा नेफ्थॉल के साथ रासायनिक क्रिया करवाकर कार्बराइल बनाया जाता है। अल्फा नेफ्थॉल को पहले कार्बन टेट्राक्लोराइड ($CC1_4$) में घोला जाता है और इस घोल में धीरे-धीरे मिथाइल आइसोसाइनेट डाला जाता है। इस रासायनिक क्रिया में ट्राइमिथाइल अमीन उत्प्रेरक के रूप में उपयोग किया जाता है।

इस क्रिया में ताप उत्पन्न होता है और ताप का नियंत्रण करना ज़रूरी है क्योंकि अधिक ताप से कार्बराइल के बजाय कुछ और बन सकता है। ताप नियंत्रण हीट एक्सचेन्जर नामक यंत्र से किया जाता है। कार्बराइल बनने के बाद भी उसमें कुछ मिथाइल आइसोसाइनेट रह जाता है। इसको निकाला जाता है। इस क्रिया में एक गूदानुमा मिश्रण (कार्बराइल और कार्बन टेट्राक्लोराइड) भी बचता है। इस "स्लरी" को सर्ज टैंक में एकत्रित किया जाता है और वहाँ से फिल्टर में भेजा जाता है। यहाँ कार्बराइल और कार्बन टेट्राक्लोराइड अलग किए जाते हैं। कार्बराइल को ड्रायर द्वारा सुखाकर उसको डस्ट कलेक्टर में भेजा जाता है जहाँ वह बोरों में भरा जाता है।

इन सब रासायनिक क्रियाओं में कुछ गैस और रसायन बच जाते हैं। इनको या तो सीधे ज्वलन टावर में भेज दिया जाता है जहाँ इनको जलाकर, हवा में छोड़ दिया जाता है या इस प्रक्रिया के पहले उनको कॉस्टिक सोडा स्क्रबर में भेजा जाता है। यहाँ उनको उदासीन किया जाता है।

कार्बराइल को अलग-अलग ताकत की कीटनाशकों में पैक किया जाता है। विभिन्न फॉर्मूलेशन इस प्रकार हैः सेविन 85 एस (स्प्रेयबल), 50 डब्ल्यू.पी. (वेटेबल पाउडर)., 10 डी (डस्ट), 5 डी, 4 जी (ग्रेन्यूल), सेविडोल 4-4 जी, सेविमोल 40 एल.वी., टेमिक 10 डी।

ज़हर ही ज़हर...

कार्बन मोनोऑक्साइड

ज़हरीली गैस है। यह यूनियन कार्बाइड में ही बनती है।

रासायनिक सूत्र : CO
रंग/गन्ध : रंगहीन/गन्धहीन
सुरक्षा की अधिकतम सीमा (TLV) : हवा के 10 लाख भागों में 50 भाग
असर : सूँघने पर घातक। सर दर्द और उल्टी। अधिक सूँघने पर खून पर असर और मृत्यु।

क्लोरीन

ज़हरीली गैस है। यह ग्वालियर रेयॉन (नागदा) से आती है। प्रथम विश्व युद्ध में इसे एक रासायनिक अस्त्र के रूप में इस्तेमाल किया गया था।

रासायनिक सूत्र : Cl_2
रंग/गन्ध : हरा-पीला/जलन पैदा करने वाली
सुरक्षा की अधिकतम सीमा (TLV) : हवा के 10 लाख भागों में 1 भाग
असर : आँख, त्वचा और फेफड़ों में असहनीय जलन

फॉसजीन

ज़हरीली गैस है। यह यूनियन कार्बाइड में ही बनती है। इसका संग्रह नहीं किया जाता है बल्कि इसको मिथाइल आइसोसाइनेट के उत्पादन के दौरान बनाया जाता है।

रासायनिक सूत्र : $COCl_2$
रंग/गन्ध : रंगहीन/घास या भूसा जैसी गन्ध
सुरक्षा की अधिकतम सीमा (TLV) : हवा के 10 लाख भागों में 0.1 भाग
असर : सूँघने पर अति घातक। फेफड़े द्रव से भर जाते हैं जिससे मृत्यु हो जाती है

मोनोमिथाइल अमीन

ज़हरीली गैस/द्रव है। यूनियन कार्बाइड इसे राष्ट्रीय केमिकल्स एण्ड फर्टीलाइज़र्स - बम्बई से खरीदती है। इसको टंकियों में रखा जाता है।

रासायनिक सूत्र : $CH_3\ NH_2$
रंग/गन्ध : रंगहीन/तेज़, मछली जैसी गन्ध
सुरक्षा की अधिकतम सीमा (TLV) : हवा के 10 लाख भागों में 10 भाग
असर : आँख व श्वसन तंत्र में जलन पैदा करती है। त्वचा को जला सकती है।

सेविन बनाने की दो विधियाँ

1. बिना मिक के उपयोग से

सोडियम अल्फा **नेफ्था** ऑक्साइड और फॉसजीन की क्रिया से क्लोरोफॉर्मेट और सोडियम क्लोराइड बनते हैं। क्लोरोफॉर्मेट और मिथाइल अमीन की क्रिया से कार्बराइल (सेविन) और हाइड्रोक्लोरिक अम्ल बनते हैं।

2. मिक के उपयोग से

मिथाइल अमीन और फॉसजीन की क्रिया से मिथाइल आइसोसाइनेट और हाइड्रोक्लोरिक अम्ल बनते हैं। मिथाइल आइसोसाइनेट और अल्फा नेफ्थॉल की क्रिया से कार्बराइल (सेविन) बनता है।

यूनियन कार्बाइड मिक रहित तरीके से सेविन बनाती थी। पर अब वे यही सेविन उस विधि से बनाते हैं जिसमें मिक का इस्तेमाल होता है। इस तरीके को अपनाने का क्या कारण हो सकता है? क्या यह कारण पैसों की बचत हो सकता है? अगर ऐसा है, तो क्या लोगों की जानों के साथ इसलिए खिलवाड़ किया गया ताकि यूनियन कार्बाइड का थोड़ा पैसा बच जाए?

कीटनाशक संयंत्र के सुरक्षा साधन?

1. स्टोर टंकी

मिथाइल आइसोसाइनेट को तीन टंकियों में रखा जाता है। इनके नम्बर 610, 611 व 619 हैं। 60 टन की क्षमता वाली एक टंकी में लगभग 40 टन मिक द्रव रखा जाता है। ये टंकियाँ स्टेनलैस स्टील की बनी हैं क्योंकि अन्य धातुओं से मिक क्रिया करता है। टंकियों का बेलननुमा आकार 40 फुट लम्बा और 8 फुट व्यास का है और वे सीमेंट कॉंक्रीट के एक चबूतरे में धँसी है। टंकियाँ पाइप से एक दूसरे से जुड़ी हैं और पाइपों में गैस या द्रव का बहाव रोकने वाले वॉल्व लगे हैं। ज़रूरत पड़ने पर एक टंकी का द्रव दूसरी टंकी में भेजा जा सकता है। हर टंकी के मुँह पर सेफ्टी डिस्क और एक सेफ्टी वॉल्व लगा है जो दबाव के 40 पौंड प्रति वर्ग इंच से ऊपर बढ़ने पर स्वतः ही खुल जाते हैं। चूँकि मिक 39.1° सेल्सियस तापमान पर गैस में बदल जाती है और भोपाल में तापमान लगभग इतना ही रहता है, इसलिए टंकियों को ठण्डा रखने के लिए शीतकारक व्यवस्था है। सामान्य तौर पर तापमान 0° सेल्सियस रखा जाता है। चूँकि मिक बहुत क्रियाशील है इसलिए टंकी के खाली हिस्से में नाइट्रोजन गैस हल्के दबाव से भरकर रखी जाती है। टैंक में नाईट्रोजन गैस भरने और निकालने की अलग से व्यवस्था रहती है।

2. कॉस्टिक सोडा स्क्रबर

50 फुट ऊँचे बोतल के आकार के इस संयंत्र में सेविन बनाने के बाद शेष बची मिक तथा अन्य गैसों को कॉस्टिक सोडा की फुहार छोड़कर बेअसर (उदासीन) किया जाता है। एक पाइप मिक की टंकियों से भी सीधा स्क्रबर में आता है। इस पाइप में सुरक्षा वॉल्व लगे हैं जो टंकी में 40 पौंड प्रति वर्ग इंच से अधिक दबाव होने पर सुरक्षा के लिए स्वतः खुल जाते हैं। स्क्रबर में गैस नीचे से ऊपर की तरफ छोड़ी जाती है और कॉस्टिक सोडा का 10 प्रतिशत
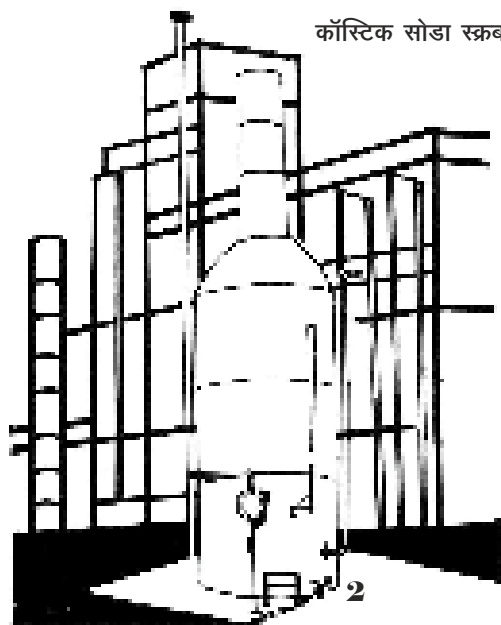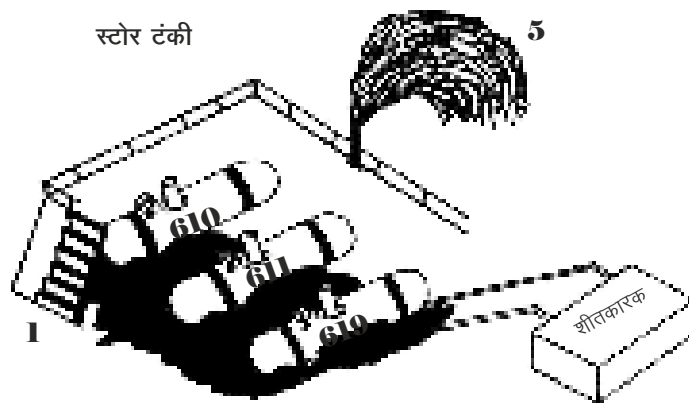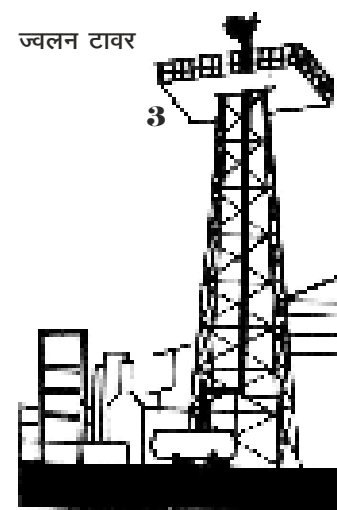
घोल ऊपर से नीचे की ओर। एक बार में गैस बेअसर न होने पर उसे दोबारा स्क्रबर में से गुज़ारने की भी व्यवस्था है। निष्क्रीय अवशेष स्क्रबर के नीचे से पाइप द्वारा निकाले जाते हैं।

3. ज्वलन टावर

स्क्रबर की क्रिया के बाद भी मिक सहित कुछ गैसें बची रह सकती हैं जो ज्वलनशील होती हैं। ये गैसें एक पाइप द्वारा ज्वलन टावर पर लाकर जलाई जाती हैं। ज्वलन टावर के मुहाने पर एक लौ 24 घण्टे जलती रहती है।

4. वेन्ट पाइप

स्क्रबर से एक और पाइप सीधे 100 फुट ऊँचे 8 इंच मोटे वेन्ट पाइप में जाता है। इस वेन्ट पाइप के माध्यम से शेष निष्क्रीय गैसें सीधे हवा में छोड़ दी जाती हैं। इसका उपयोग तभी किया जाता है जब स्क्रबर से शेष बची गैसें कम ज़हरीली हों और उन्हें ज्वलन टावर में जलाने की ज़रूरत न हो।

5. पानी का परदा

चूँकि मिक पानी की क्रिया पर निष्प्रभावी हो जाता है, पानी की ज़बरदस्त बौछार से मिक को बेअसर बनाया जा सकता है। लेकिन पानी की मात्रा मिक से 9 गुना अधिक होना चाहिए। टंकियों से यदि कोई छोटा-मोटा रिसन होता है तो टंकियों के आसपास लगे फव्वारे चलाकर उनसे आ रहे पानी से मिक उदासीन हो जाता है। ये फव्वारे टंकी के चारों ओर 30 से 45 फुट ऊँचे पानी के परदे का निर्माण करते हैं।
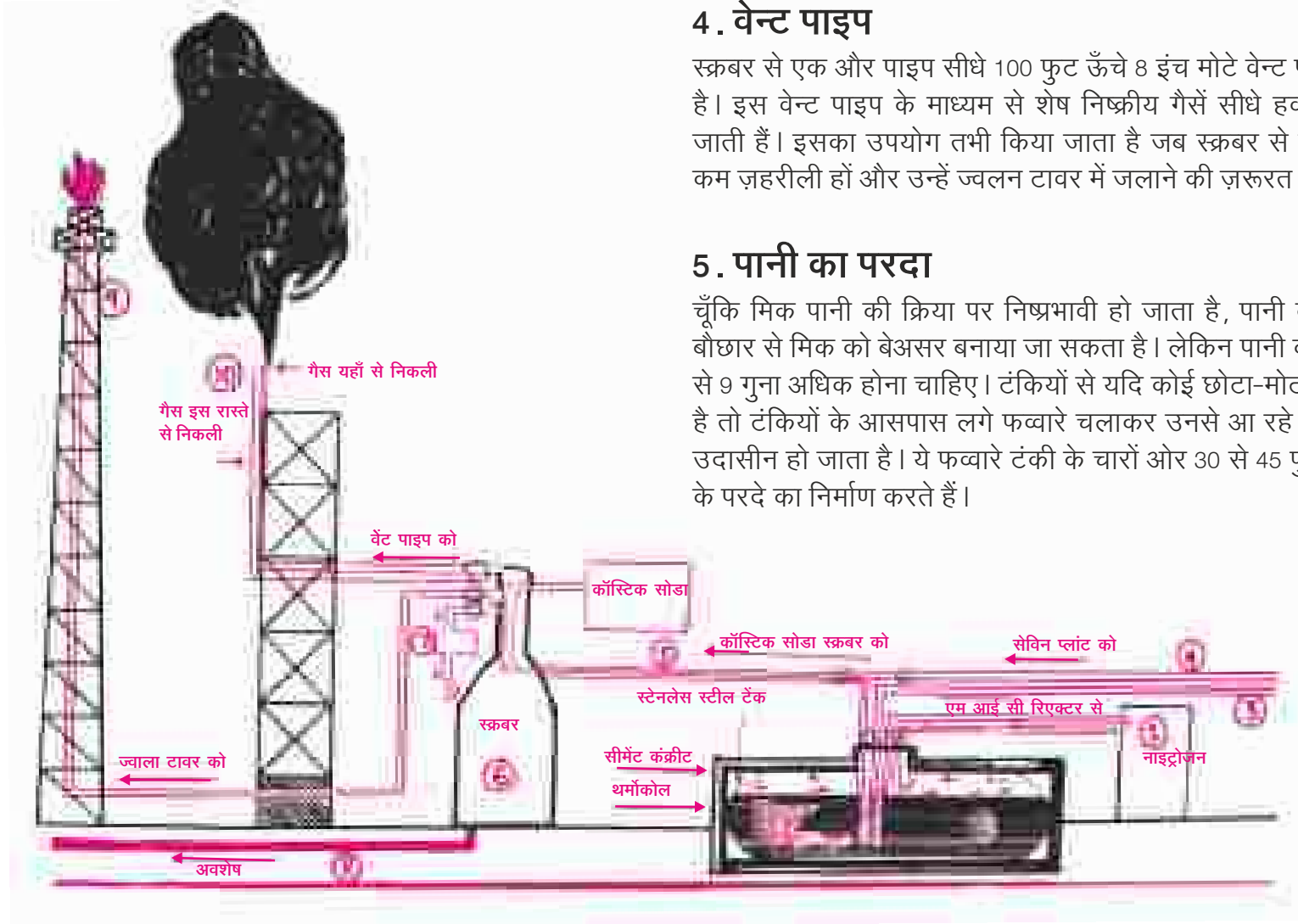
भोपाल गैस चेम्बर कैसे बना?

दुर्घटना क्यों हुई, इसके कारणों की ठीक जानकारी किसी को नहीं है।

दुर्घटना के सम्भावित कारण

शुद्ध मिथाइल आइसोसाइनेट को यदि अधिक दिनों तक जमा करके रखा जाता है तो उसमें पॉलीमराइज़ेशन की क्रिया होने की सम्भावना रहती है। पॉलीमराइज़ेशन एक विशेष क्रिया है जिसमें पदार्थ के अणु एक-दूसरे से जुड़ जाते हैं --- जैसे ज़ंजीर में कड़ियाँ --- और एक ज़्यादा बड़ा अणु बना लेते हैं। मिथाइल आइसोसाइनेट के पॉलीमराइज़ेशन से ऊष्मा उत्पन्न होती है। पॉलीमराइज़ेशन की क्रिया न हो इसके लिए मिथाइल आइसोसाइनेट में थोड़ी (0.02 प्रतिशत) फॉसजीन मिलाकर रखा जाता है। इससे अधिक फॉसजीन होने पर एक नया खतरा पैदा होता है। टंकी में रखी मिक में 2 प्रतिशत फॉसजीन बताई जाती है। यानी 40 टन मिक में लगभग 800 किलोग्राम फॉसजीन थी।

ऐसा कहा जाता है कि टंकी नं. 610 में आधा किलोग्राम पानी चला गया था। पानी टंकी में कैसे पहुँचा, यह किसी को मालूम नहीं है। शायद वॉल्व साफ करते समय गलती से पानी टंकी में घुस गया। इस पानी ने मिथाइल आइसोसाइनेट में उपस्थित फॉसजीन के साथ क्रिया कर ली। इस क्रिया से हाईड्रोक्लोरिक अम्ल और कार्बन डाइऑक्साइड बना। (हाइड्रोक्लोरिक अम्ल की टंकी की स्टेनलैस स्टील की चादरों से क्रिया होने पर लोहे का तत्व भी मिक में घुल गया।) इस क्रिया में ऊष्मा उत्पन्न हुई और गैस बनने से टंकी में दबाव भी बढ़ा। ताप बढ़ने से, और उपस्थित अशुद्धियों से, द्रव मिथाइल आइसोसाइनेट में पॉलीमराइज़ेशन शुरू हो गया। इस क्रिया में और ऊष्मा उत्पन्न हुई। इससे पॉलीमराइज़ेशन तेज़ हो गया और द्रव मिथाइल आइसोसाइनेट, अधिक ताप के कारण, गैस में परिवर्तित हो गया। पॉलीमराइज़ेशन शुरू में धीरे-धीरे होता है, बाद में यह क्रिया तेज़ हो जाती है।

पॉलीमराइज़ेशन से तापमान बढ़कर 100° से 200° सेल्सियस के बीच हो गया। क्रिया इतनी तेज़ थी कि टंकी हिलने लगी और उसके चारों तरफ बने सीमेन्ट-काँक्रीट के चबूतरे में दरार पड़ गई। द्रव गैस में बदलने से टंकी के अन्दर दबाव और बढ़ गया। और यह इतना बढ़ा कि गैस ने सेफ्टी डिस्क को तोड़कर सेफ्टी वॉल्व खोल लिया। यह वॉल्व 40 पौंड प्रति वर्ग इंच दबाव ही सह पाता है। वॉल्व खोलकर गैस सीधी स्क्रबर में चली गई।

कहा जाता है कि....

- स्क्रबर चालू नहीं किया गया क्योंकि उसको चालू करने वाली दोनों मोटरें खराब थीं।
- स्क्रबर चालू किया था, पर कॉस्टिक सोडे का घोल नहीं था।
- स्क्रबर चालू किया था, पर कॉस्टिक सोडे का घोल ज़्यादा तनु था।
- रिसन इतनी अधिक मात्रा और दबाव में हो रहा था कि रिस रही गैस की पूरी मात्रा को उदासीन कर पाना सम्भव नहीं था।

स्क्रबर से एक पाइप ज्वलन टावर में जाती है, जहाँ पूरी फैक्टरी की बेकार बची ज्वलनशील गैसों को जलाया जाता है। यह ज्वलन टावर पिछले कुछ दिनों से मरम्मत के लिए बन्द था।

आठ इंच व्यास वाला एक वेन्ट पाइप स्क्रबर में आसमान में जाता है, जहाँ से उत्पादन के बाद बची अवशेष निष्क्रीय गैसें बाहर निकाली जाती हैं। संयोग से यह पाइप दुरुस्त था और काम कर रहा था। गैस इसी रास्ते से बाहर निकल गई और जानलेवा सफेद बादल के रूप में वातावरण में छा गई।

दुर्घटना से उपजे कुछ सवाल....

- मिथाइल आइसोसाइनेट को इतने लम्बे समय तक जमा करके क्यों रखा गया था? जबकि सुरक्षा की दृष्टि से इसे 15 दिन से अधिक जमा नहीं रखा जाना चाहिए। यह मिथाइल आइसोसाइनेट 22 अक्टूबर को तैयार की गई थी और 15 नवम्बर को इस्तेमाल की जानी थी।
- कहा जाता है कि टंकी वॉटर प्रूफ थी, फिर पानी अन्दर कैसे पहुँचा?
- खतरे की सूचना देने के लिए टंकियों में ताप और दबाव के सूचक लगे रहते हैं। टंकी नं. 610 के दोनों सूचक खराब थे। उनको क्यों नहीं सुधारा गया था?
- मिक में फॉसजीन की मात्रा इतनी अधिक क्यों थी?
- टंकियों का तापमान कम रखने वाला शीतकारक यंत्र (रेफ्रिजरेशन सिस्टम) साल भर से बन्द था। क्यों?
- मिथाइल आइसोसाइनेट द्रव जिन टंकियों में रखा जाता है वे पाइप द्वारा आपस में जुड़ी रहती हैं। दबाव पड़ने पर पाइपों के बीच लगे वॉल्व को खोलकर द्रव को एक टंकी से दूसरी टंकी में भेजा जा सकता है। दुर्घटना के समय टंकी नं. 610 से निकल रही मिक को खाली टंकी नं. 619 में क्यों नहीं भर लिया गया? यह व्यवस्था ऐसी क्यों नहीं थी कि दबाव बढ़ने पर वॉल्व अपने आप खुल जाते?
- यह स्पष्ट है कि स्क्रबर महत्वपूर्ण सुरक्षा साधन है। यदि मोटर खराब थी तो उसे सुधारा क्यों नहीं गया?
- स्क्रबर में सोडा की सान्द्रता गाढ़ापन कम क्यों थी?
- स्क्रबर स्वचालित क्यों नहीं था। ताकि खतरा उत्पन्न होने पर अपने आप चालू हो सके?
- स्क्रबर की क्षमता तो मात्र पहले आधे घण्टे में 5 टन गैस व उसके बाद हर आधे घण्टे में एक टन गैस निष्क्रीय करने की है जबकि 40 टन से भी अधिक गैस टंकी में भरी थी जो एक घण्टे से कम में ही सारी छूट गई। सुरक्षा साधनों में ऐसी कमी क्यों?
- ज्वलन टावर को 24 घण्टे जलते रहना आवश्यक है। यदि वह खराब था तो समय रहते ठीक क्यों नहीं किया गया?
- क्या खर्चा बचाने के लिए सुरक्षा संयंत्रों को बन्द किया गया था?

ऐसा क्यों

फैक्टरी में जिस तरह के खतरनाक रसायनों का उपयोग होता था, उसके हिसाब से सुरक्षा व्यवस्था और खतरे की चेतावनी देने वाले सूचक यंत्र पर्याप्त नहीं थे। जो उपलब्ध थे वो काम नहीं कर रहे थे। यह तो सामान्य हालत की बातें ठहरीं। 2 दिसम्बर जैसी असामान्य स्थिति का मुकाबला करने की कोई तैयारी या पूर्व योजना तो थी ही नहीं। जबकि 11 सितम्बर 1984 को लिखे गए यूनियन कार्बाइड के एक मेमोरेन्डम में ऐसी ही स्थिति की चेतावनी अमेरिका स्थित प्लान्ट के लिए दी गई थी। क्या अमेरिकी प्लान्ट ने इस तरह की सम्भावना की जानकारी भोपाल प्लान्ट को पहुँचाई? खतरा टालने की कोई तरकीब सोची? खतरनाक मिक की इतनी अधिक मात्रा का भण्डारण करना क्या ज़रूरी था? मिक का तुरन्त उत्पादन और तुरन्त सेविन में परिवर्तन की प्रणाली क्यों नहीं अपनाई गई? सेविन का उत्पादन बिना मिक का उपयोग किए दूसरे तरीके से भी सम्भव है। वह तरीका क्यों नहीं अपनाया गया।

सुरक्षा में लापरवाही क्यों?
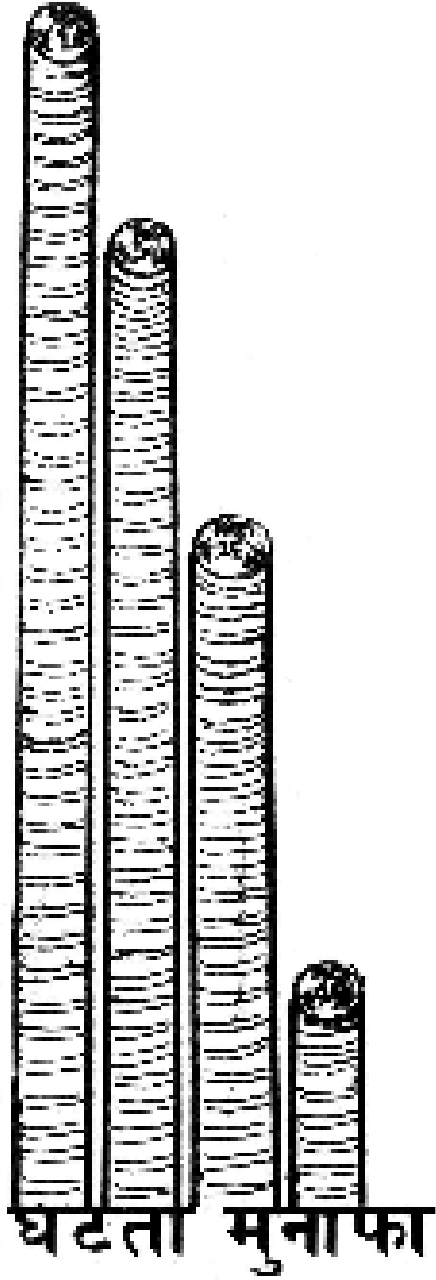
- कम्पनी के अमेरिकी विशेषज्ञों के अनुसार भी सुरक्षा साधन ठीक नहीं थे। अमेरिका में इस तरह कारखाना चलाने ही नहीं दिया जाता।
- अमेरिका में यूनियन कार्बाइड के कारखाने में कम्प्यूटर चलित सुरक्षा साधन हैं। भारत में हाथ से चलित सुरक्षा साधन हैं।
- पिछड़े देशों की गरीबी और विकास की ज़रूरतों का फायदा उठाकर बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ खतरनाक से खतरनाक कारखाने, सावधानी बरते बिना यहाँ चला लेती हैं। इन देशों के नियम-कानून इन मामलों में बहुत कमज़ोर और अपर्याप्त हैं।
- उत्पादन न होने वाले महीनों में सुरक्षा व्यवस्था भी बन्द कर दी जाती थी --- मिक टंकी में भरी हो या नहीं। कहा जाता है कि सुरक्षा साधनों को चालू रखने पर हर दिन 20,000 रुपयों का खर्चा आता है।
- आश्चर्य की बात यह है कि यूनियन कार्बाइड ने सभी सुरक्षा साधनों को एक साथ निष्क्रीय कैसे होने दिया, खासकर जब इतने विषैले पदार्थ उनके भण्डार में थे और कार्बराइल का उत्पादन 26 नवम्बर तक चालू था।
- कई सालों से भोपाल के कारखाने में बन रहे सेविन कीटनाशक की माँग घट रही थी। इसलिए कारखाना साल में तीन-चार महीने ही चल रहा था।
- पिछले चार सालों में यूनियन कार्बाइड को 5 करोड़ रुपए का घाटा हुआ।
- खर्चा बचाने के लिए मज़दूरों की छँटनी हुई। प्रशिक्षित मज़दूरों को बैटरी कारखाने भेजा जाने लगा। कई नौसिखिए और सस्ते मज़दूर खतरनाक मिक प्लान्ट को सम्हाले थे। काम के घण्टों में कटौती की गई।
- सेविन बनाने की दो विधियाँ उपलब्ध थीं। तो फिर खतरनाक मिक
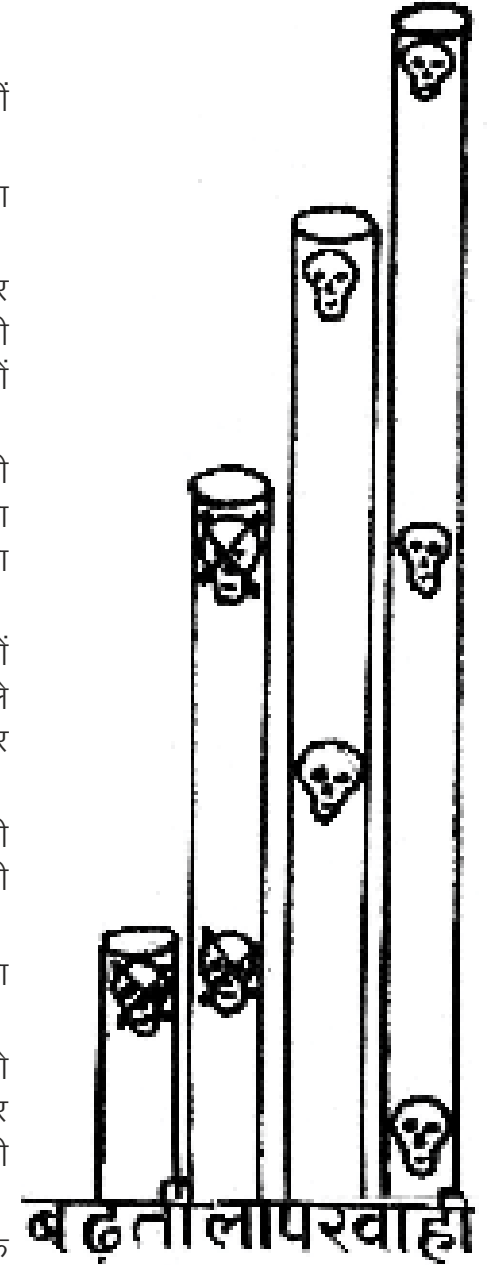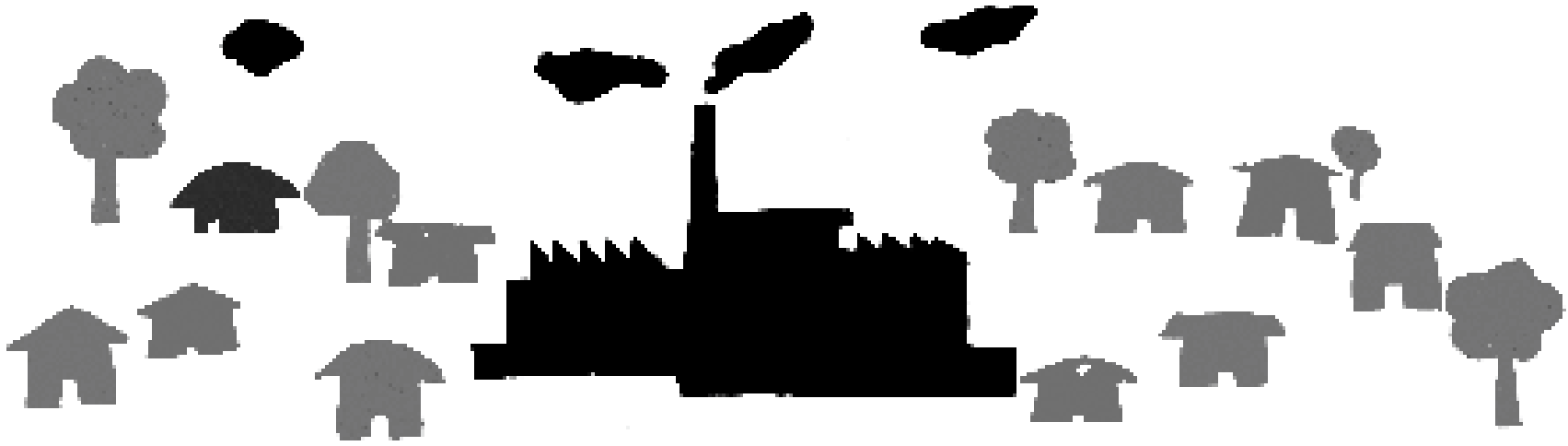
कारखाना चलाने की अनुमति कैसे?

अक्तूबर 1975 में भारत सरकार के उद्योग मंत्रालय ने यूनियन कार्बाइड को लाइसेंस दिया तब क्या इन बातों का ध्यान नहीं रखना चाहिए था कि : ---

- सेविन कीटनाशक बनाने के सबसे सुरक्षित तरीके की ही अनुमति दी जाए (सेविन बनाने के ऐसे भी तरीके हैं जिनमें मिक का उपयोग नहीं होता)।
- कारखाने में ऐसी चीज़ों का इस्तेमाल न हो जिससे मनुष्य जीवन और पर्यावरण पर ऐसा घातक असर पड़े जिसका इलाज तक नहीं मालूम? और जिन चीज़ों के असर के बारे में दुनिया भर में जानकारी ही बहुत कम हो।
- खतरनाक कारखाने शहरी आबादी से सुरक्षित दूरी पर बनाए जाएँ। कनाडा देश में इसी कारण यूनियन कार्बाइड को कारखाना खोलने की अनुमति नहीं दी गई थी।

- 1975 में यूनियन कार्बाइड को कीटनाशक एक्ट के तहत विशेष लाइसेंस मिला।
- हालाँकि इस बीच कारखाने में कई दुर्घटनाएँ घटती रहीं। 1982 में एक मज़दूर की मृत्यु हुई, इसके बाद जो जाँच समिति बिठाई गई थी उसकी रपट का कुछ पता नहीं।
- 1983 तक सरकार यूनियन कार्बाइड के दोनों लाइसेंस का नवीनीकरण करती गई। सेविन के अलावा दो और नए कीटनाशकों को बनाने के लिए अनुमति दी गई। ये भी मिक से बनते हैं।
- हर साल फैक्टरी इन्सपेक्टर कारखाने के सुरक्षा प्रबन्धों की नाम मात्र जाँच करके खानापूर्ति करते रहे।
- दिसम्बर 1984 की भीषण दुर्घटना के बाद जाकर कहीं सरकार ने यूनियन कार्बाइड के लाइसेंस रद्द करने के कदम उठाए और श्रम मंत्रालय की ज़िम्मेदारी को स्वीकार किया।

सवाल दर सवाल...

लोग जानना चाहते हैं..... हमारी राय बहुत से सवालों पर.....

- पोस्ट मॉर्टम रिपोर्ट के जाँच के नतीज़े
- पल्मोनरी इडीमा का डर
- दिमाग पर असर
- होने वाले बच्चों पर असर
- आनुवंशिक असर
- कैंसर, लकवा का डर
- क्या हवा, पानी, सब्ज़ियाँ सुरक्षित हैं?
- पेड़ पौधों पर क्या असर है?
- फैक्टरी में इस्तेमाल होने वाले ज़हरीले पदार्थ?
- फैक्टरी में तकनीकी गड़बड़ियाँ?

मगर हमें कहना है....
सब ठीक-ठाक है

पर यह तालाबन्दी क्यों?

यह कहने का आधार क्या है?
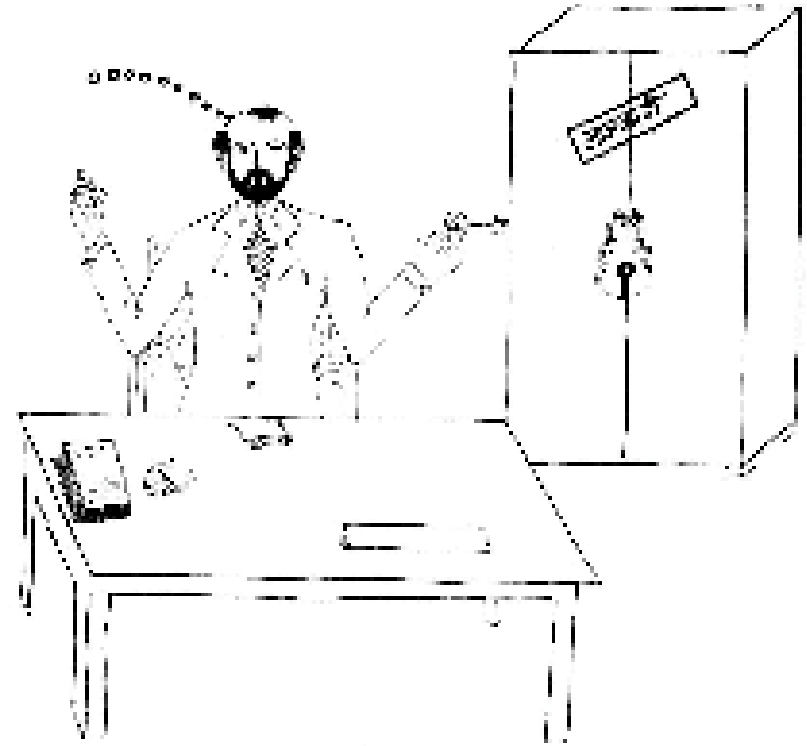
ज़रूरत है....

- **सही वैज्ञानिक जाँच की**
- **नतीजों को विश्लेषण सहित सरल भाषा में जनता के सामने रखने की**

ऐसा क्यों नहीं किया जा रहा है?

गैस दुर्घटना से एक बहुत बड़ा सबक यह भी मिला कि भविष्य में ऐसी सम्भावित भयंकर घटनाओं से सुचारू रूप से निपटने की क्षमता का भी विकास होना चाहिए। सारा तंत्र ही चौपट हो गया था --- चाहे अस्पतालों का हो या शासन का। वैज्ञानिक व तकनीकी विशेषज्ञों की कमी तो दयनीय ही थी। प्रभावितों की चिकित्सा, उनकी सहायता एवं पुनर्स्थापना का सारा कार्य चालू तरीके से हो रहा था। जबकि व्यक्तियों का कार्य, चाहे वह आम नागरिक हो या चिकित्सक, विशेषतः प्रशंसनीय रहा। पर दुर्घटना के प्रभावों से जूझने के लिए आवश्यक समन्वय का घोर अभाव था।

उपयुक्त व्यवस्था के अलावा कुछ ऐसे प्रश्न भी हैं जो स्वयं उभरकर सामने आते हैं, जैसेः

- फैक्टरी के इर्द-गिर्द रहने वाले लोगों की फैक्टरी से निकलने वाले पदार्थों के बारे में तथा ऐसी दुर्घटनाएँ होने पर उनको क्या करना चाहिए, इसके बारे में जानकारी क्यों नहीं दी गई?
- इन लोगों को बचाव प्रशिक्षण या प्रथम चिकित्सा प्रशिक्षण क्यों नहीं दिया गया जो ऐसे मामलों में एक कानूनी आवश्यकता है?
- अस्पतालों को ज़हरीले रसायनों के खतरों के बारे में पूर्व सूचना तथा ऐसे समय में चिकित्सा की क्या व्यवस्था हो, इसके बारे में पूरी जानकारी क्यों नहीं दी गई, जबकि मिक जैसे ज़हर को काटने वाली दवा ही नहीं है?
- शासन अपने चिकित्सा तथा पर्यावरण विशेषज्ञों को तुरन्त जुटाने में क्यों असमर्थ रहीं ताकि तत्काल प्रयोग करके दुर्घटना की और उसके कारण होने वाली भीषण क्षति व उसके दूरगामी प्रभावों का पता लगाया जा सके?
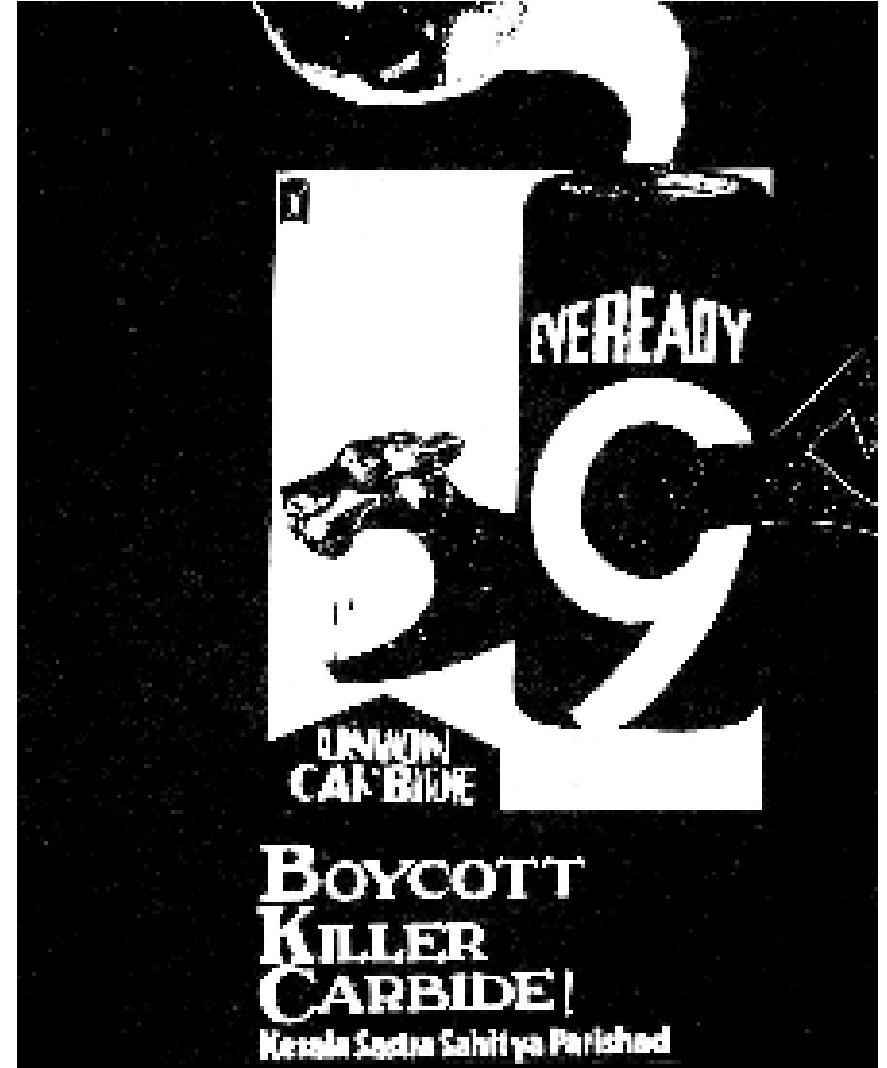
हत्यारी कार्बाइड का बहिष्कार करो

केरल शास्त्र साहित्य परिषद

यह वही यूनियन कार्बाइड है...

यह

वही यूनियन कार्बाइड है जिसके बारे में एक अमेरिकी व्यापारिक पत्रिका "फॉरचून" ने लिखा था :

"यूनियन कार्बाइड मुनाफाखोरी से ग्रस्त एक ऐसी प्रतिक्रियावादी राक्षस है, जिसे नागरिकों की भलाई से कोई वास्ता नहीं है।"

यह

वही यूनियन कार्बाइड है जिसे अमेरिका की वित्तीय मामलों की प्रसिद्व पत्रिका "वॉल स्ट्रीट जर्नल" ने 1979 के प्रारम्भ में "एक भारी भरकम भद्दा जोखिम भरा उद्योग" निरूपित किया था।

यह

वही यूनियन कार्बाइड है जिसे 1960 के दशक के अन्त में एवं 1970 के दशक के प्रारम्भ में पर्यावरण का सबसे बड़ा दुश्मन ठहराया गया था।

यह

वही यूनियन कार्बाइड है जिसे विषैली जानलेवा गैसों के उपयोग के कारण कनाडा तथा स्कॉटलैंड से बाहर निकाल दिया गया था।

सेविन का उत्पादन

वर्ष	उत्पादन अनुमति (टन)	उत्पादन क्षमता (टन)	उत्पादन (टन)	बिक्री मात्रा (टन)	आय (करोड़ रुपए)
1982	5000	5000	2308	2211	22.47
1983	5250	5000	1657	1500	17.29

शोध केन्द्र

- शोध एवं विकास केन्द्र -- कलकत्ता
- शोध एवं विकास केन्द्र -- भोपाल

भोपाल का शोध केन्द्र सन् 1976 में लगभग 20 करोड़ रूपए की लागत से स्थापित हुआ। इस केन्द्र को आयकर से छूट दी गई। इस केन्द्र का वार्षिक बजट (1984) 66 लाख रुपए है। कहा जाता है कि इस केन्द्र में ऐसा शोध किया जा रहा था जिसका सम्बन्ध जैविक और रासायनिक युद्ध से भी है। (दुश्मन को सफाया करने की तकनीक एटम बम से आगे बढ़ चुकी है। ज़हरीली गैसें छोड़कर दबे पाँव मारना रासायनिक युद्ध का तरीका है -- और दूसरा, कॉलेरा, टाइफॉइड से भी ज़्यादा घातक बीमारियाँ फैलाने वाले जीवाणुओं की नस्ल विकसित करना जैविक युद्ध का तरीका है। दुश्मन के इलाके में ऐसे जीवाणु छोड़कर महामारी फैलाई जा सकती है।)
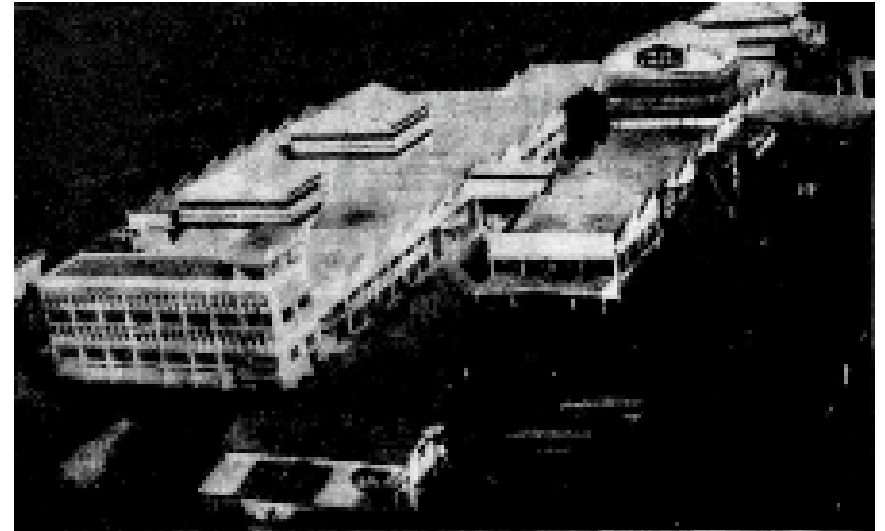
यूनियन कार्बाइड का इतिहास

- यूनियन कार्बाइड सन् 1886 से एक कार्बन कम्पनी के रूप में विकसित हुई जिसने सबसे पहले शुष्क सेल बैटरी बनाना प्रारम्भ किया।
- सन् 1917 में चार अन्य कम्पनियों को मिलाकर यूनियन कार्बाइड व कार्बन कॉर्पोरेशन बनाया गया।
- पहले विश्व युद्ध में अमेरिका की भूमिका को देखकर कम्पनी ने रसायन व गैस निर्माण में भी दिलचस्पी ली।
- दूसरे विश्व युद्ध में पहली बार यूनियन कार्बाइड का परमाणु ऊर्जा अभियान उभरकर सामने आया।
- 1970 के दशक में यूनियन कार्बाइड ने रोज़मर्रा के काम आने वाली वस्तुओं के उत्पादन में रुचि लेना प्रारम्भ किया।
- 1980 में यूनियन कार्बाइड ने अमेरिकी सरकार के कई परमाणु ऊर्जा केन्द्र चलाने की ज़िम्मेदारी उठाई।
- यूनियन कार्बाइड के उत्पादकों की वार्षिक बिक्री 10 अरब डॉलर से अधिक है।
- यूनियन कार्बाइड का अमेरिका में तीसरा स्थान तथा विश्व रसायन बाज़ार में सातवाँ स्थान रहा है।
- 1983 में यूनियन कार्बाइड ने 7.9 करोड़ डॉलर का मुनाफा कमाया है।
- विश्व के 37 देशों में यूनियन कार्बाइड के 134 उद्योग कार्यरत हैं। इनमें से 9 दक्षिण अफ्रीका में हैं।
- यूनियन कार्बाइड की सबसे अधिक बिक्री ऑक्सीजन, क्रोमियम, मैंगनीज़ व स्टील प्लान्ट में उपयोग में आने वाली सम्बन्धित धातुओं व रसायनों की है।

भारत में

- भारत से यूनियन कार्बाइड का रिश्ता बहुत पुराना है।
- यूनियन कार्बाइड सन् 1905 में नेशनल कार्बन कम्पनी (इण्डिया) लिमिटेड के नाम से भारत में आई।
- यूनियन कार्बाइड ने बैटरी के क्षेत्र में कारोबार शुरू किया।
- यूनियन कार्बाइड कॉर्पोरेशन (अमेरिका) भारत में यूनियन कार्बाइड (इण्डिया) लिमिटेड के नाम से सन् 1934 में स्थापित हुई।
- भारत में यूनियन कार्बाइड के 13 कारखाने हैं। पहला कारखाना कलकत्ता में 1934 में लगाया गया।
- सन् 1983 में यूनियन कार्बाइड (इण्डिया) लिमिटेड की कुल बिक्री 210 करोड़ रुपए थी। इसमें मुनाफा 14.77 करोड़ रुपए था। टैक्स चुकाने के बाद कम्पनी को 9.32 करोड़ रुपए का मुनाफा हुआ।
- यूनियन कार्बाइड (इण्डिया) लिमिटेड का पंजीकृत कार्यालय कलकत्ता में है।

भोपाल में

- सन् 1961 में एग्रो केमिकल्स (कृषि रसायन) बनाने का कारखाना भोपाल में शुरू हुआ। इस कारखाने में सेविन से फॉर्मूलेशन किया जाता था। यानी अमेरिका से बना बनाया पाउडर मँगवाकर उसमें कुछ पदार्थ मिलाए जाते थे। इससे उसकी सान्द्रता (कॉन्सेन्ट्रेशन) आवश्यकता-नुसार बनाई जाती थी।
- सन् 1970 में यूनियन कार्बाइड ने भारत में सेविन बनाने के लिए लाइसेंस माँगा।

कारखाने

कलकत्ता 1934	बैटरी सेल का सामान बाहर से मँगवाकर सेल बनाया जाता था	मद्रास 1952		हैदराबाद 1967	शुष्क सेल का उत्पादन	विशाखापटनम
		लखनऊ 1958	टॉर्च का उत्पादन	भोपाल 1968	कीटनाशक का उत्पादन	
1940	सेल पूरी तरह यहीं बनने लगा	कलकत्ता 1965	सिनेमा आर्क कार्बन	बम्बई 1971	मैंगनीज़ डाइऑक्साइड का उत्पादन	

- सन् 1973 में यूनियन कार्बाइड (इण्डिया) लिमिटेड और यूनियन कार्बाइड कॉर्पोरेशन (अमेरीका) के बीच एक समझौता हुआ। इस समझौते के अन्तर्गत यह तय हुआ कि सेविन और कुछ अन्य कीटनाशक भारत में ही बनाए जाएँगे। इसके लिए मिथाइल आइसोसाइनेट अमेरिका से आयात किया जाएगा। साथ-साथ सेविन बनाने के लिए आवश्यक मशीनरी का भी आयात किया जाएगा।
- सन् 1975 में यूनियन कार्बाइड को सरकार से सेविन बनाने का लाइसेंस मिला।
- सन् 1977 में भारत में पहली बार आयातित मिथाइल आइसोसाइनेट से सेविन बनाया गया।
- सन् 1979 में मिथाइल आइसोसाइनेट का उत्पादन भोपाल कारखाने में शुरू हुआ।
- सन् 1983 में नए प्रकार के कीटनाशक बनाने के लिए यूनियन कार्बाइड को दो और लाइसेंस मिले।

उत्पादन

1.	एवरेडी बैटरी	109.74
2.	टॉर्च	13.85
3.	सिनेमा आर्क कार्बन	4.38
4.	औद्योगिक कार्बन }	13.43
5.	कार्बन इलेक्ट्रोड }	
6.	फोटो एन्ग्रेविंग प्लेट	1.30
7.	कार्बनिक रसायन	11.63
8.	पॉलीएथिलीन	35.85
9.	स्टेलाइट कास्टिंग }	0.97
10.	ट्यूब रॉड }	
11.	इलेक्ट्रोलिटिक मैंगनीज़ डाइऑक्साइड	1.22
12.	कीटनाशक	17.29
13.	मछली तथा अन्य समुद्री वस्तुएँ	4.23
14.	ओलीफिन	8.97

'I'm the Chosen One for longer life

Red Eveready

1983 बिक्री (करोड़ रुपए में)

बिक्री केन्द्र

नई दिल्ली		आन्ध्र प्रदेश	: सिकन्दराबाद
गुजरात	: बड़ौदा		गुन्टूर
	: अहमदाबाद	तमिलनाडु	: मद्रास
महाराष्ट्र	: बम्बई	केरल	: कोचीन
	पुणे	बिहार	: पटना
मध्य प्रदेश	: इन्दौर	पं. बंगाल	: कलकत्ता
	जबलपुर	राजस्थान	: जयपुर
उत्तर प्रदेश	: लखनऊ	असम	: गुवाहाटी
	कानपुर	कर्नाटक	: बैंगलूर

साँस रोकिए... और भी हैं भोपाल

- जहाँ पेड़, पौधे, खेत मुरझाते हैं
- जहाँ मछलियाँ और मवेशी मरते हैं
- जहाँ जानलेवा बीमारियों का फन्दा कसता है आदमी पर
- पर, धीरे... धीरे... हर दिन।

यहाँ फेफड़े खराब किए जाते हैं

एसबेस्टॉस खदानों और कारखानों में काम करने वालों को फेफड़ों की बीमारी एसबेस्टॉसिस हो जाती है।

मध्य प्रदेश में एसबेस्टॉस खदानें मैहर, सतना, कटनी, जबलपुर क्षेत्र में हैं। भारत में एसबेस्टॉस के करीब 20 कारखाने आन्ध्र प्रदेश, गुज़रात, महाराष्ट्र, तमिलनाडु और हरियाणा में हैं।

एसबेस्टॉस के रेशे इतने छोटे होते हैं कि आँख से दिखते नहीं हैं। ये फेफड़े की दीवार पर जमकर उसको कड़ा कर देते हैं। फेफड़े में हवा आने और बाहर निकलने में रुकावट पैदा हो जाती है। खाँसने में दर्द, सीने में आवाज़; साँस लेने में घुटन और परेशानी, सूखा कफ निकलना, वज़न घटना, नाखूनों में दाग पड़ना इसके और लक्षण हैं।

एसबेस्टॉस के रेशों में फेफड़े, पेट, बड़ी आँत और भोजन नली का कैंसर भी हो सकता है। कई लोगों को ऐसे कैंसर की शिकायत दस वर्षों बाद जाकर हुई। एसबेस्टॉस के रेशों से टी.बी. भी हो सकती है।

रूई कहे जुलाहे से, तू क्या धुनके मोय...

कपड़ा कारखानों में रूई के रेशों के साँस के साथ अन्दर जाने से हर छह में से एक मज़दूर को फेफड़े की बिसिनोसिस बीमारी हो जाती है। इससे काम के समय हाँफना, छाती में कड़ापन, खाँसी और फेफड़े की साँस लेने की क्षमता घट जाती है। बीमारी अगर बढ़ जाए तो लाइलाज है। इसके मरीज़ को आगे चलकर दमा, टी.बी. हो सकती है।

हमें भी रहना है इस पृथ्वी पर

डॉक्टरों की भूमिका

बिसिनोसिस, सिलिकोसिस, एसबेस्टॉसिस के लक्षण दमा और ब्रॉंकाइटिस से मिलते जुलते हैं। कम्पनी मालिक और कम्पनी डॉक्टर इसका फायदा उठाकर बीमारी को ब्रॉंकाइटिस या दमा बताते हैं। इससे यह साबित नहीं किया जा सकता है कि बीमारी कारखाने में काम करने से हुई है। इस तरह कम्पनी मालिक मज़दूर के इलाज का खर्चा, मुआवज़ा और अन्य खर्चों से बच जाता है। साथ ही बाकी मज़दूरों को बीमारी से बचाने के लिए सुरक्षा साधन उपलब्ध कराने की ज़िम्मेदारी से भी बचा जाता है।
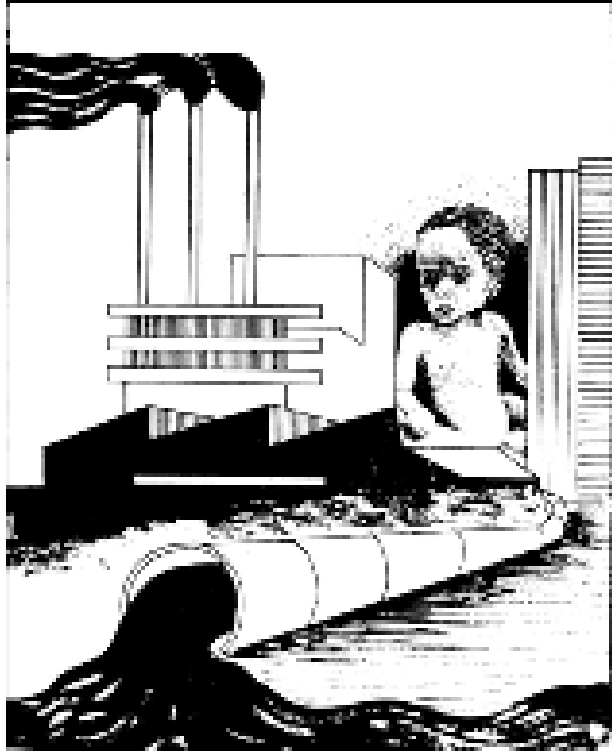
डरमेटाइटिस

कपड़ा, रसायन, रंगाई, छपाई, इंजिनियरिंग आदि उद्योगों में रासायनिक पदार्थों का इस्तेमाल करते रहने से डरमेटाइटिस नामक चमड़ी का रोग हो जाता है। चमड़ी सूजकर लाल हो जाती है। उसमें खुजली होने लगती है। चमड़ी में से पानी जैसा द्रव बहने लगता है। चमड़ी धीरे-धीरे सूखकर सिकुड़ जाती है।

नागदा पर पी.यू.सी.एल. की रिपोर्ट से

मंदसौर में मंद मौत....

मध्य प्रदेश में स्लेट पेन्सिल निर्माण की 500 इकाइयाँ हैं। इनमें से 150 केवल मंदसौर में हैं। स्लेट पत्थर काटते वक्त उसकी धूल में साँस लेते रहने से फेफड़े की सिलिकोसिस बीमारी हो जाती है। इसमें स्लेट पत्थर की धूल फेफड़ों में जमकर उन्हें खराब कर देती है। इससे साँस लेने में तकलीफ, बीमारी बढ़ने पर खून की उल्टी और 15-20 दिन बाद मृत्यु हो जाती है। धूल फाँकता हुआ मज़दूर स्लेट पेन्सिल काटने की मशीन 2-3 साल से अधिक नहीं चला सकता। हर वर्ष 150 से 200 मज़दूर इस बीमारी के शिकार होते हैं। पिछले 10 साल में 2000 से अधिक मज़दूर सिलिकोसिस के कारण असमय ही मौत के शिकार हो गए। मज़दूरों के अलावा बस्ती वाले लोग भी इस ज़हरीली धूल में साँस ले रहे हैं।

ग्वालियर रेयॉन, नागदा

बिड़ला का कपड़ा कारखाना चम्बल नदी के पास उगलता है ज़हरीली गैंसे....

- **कार्बन डाइसल्फाइडः** जिससे कुछ महीनों में ही सर चकराना, हाथ-पाँव में पसीना आना, और धीरे-धीरे शरीर का एक तरफ का हिस्सा सुन्न हो जाना, दिमागी शिथिलता, आँखों और अन्तड़ियों के रोग, अनिद्रा और नींद में चलने की बीमारी होने लगती है।
- **हाइड्रोजन सल्फाइडः** तेज़ी से मौत दबोच लेती है, साइनाइड ज़हर की तरह।
- **सल्फर डाईऑक्साइडः** साँस लेने में तकलीफ, भूख मारती है, खाँसी से शुरू होकर हृदय रोग हो जाता है।

  इन गैसों की चपेट में कितने मज़दूर मरे, कितने ही बीमार हैं। फैक्टरी का गन्दा पानी नदी में मिलकर ज़हर फैलाता है --- और कुँओं को भी नहीं छोड़ता। पीने का पानी दूभर हुआ। कुछ लोगों की जानें भी गईं। फैक्टरी से निकला पारा नदी के पानी में मिलकर किनारे लगी घास को ज़हर खिलाता है। और चरती गाय के दूध तक पहुँच जाता है।

फैक्टरी की राख से फसलें खराब होती हैं और फेफड़े भी!!

जुआरी एग्रोकेमिकल्स, गोवा

- 1973 में शुरू।
- तीन माह के अन्दर नदी में मछलियों ने दम तोड़ा।
- एक साल में मवेशी मरने लगे।
- दो साल में नारियल के पेड़ मुरझाने लगे।

लकवे की नदी -- कालू

बम्बई की कालू नदी में कारखानों का कचरा फिकता है। नदी बहा ले जाती है ज़हर - गाँव-गाँव। अम्बीवली गाँव के पास कालू नदी के पानी में ज़हरीले पारे का असर पाया गया है। पारे का असर नदी के आसपास घास में, और घास से गाय के दूध में और दूध के ज़रिये मनुष्य के शरीर में पहुँच रहा है। पारे के ज़हर से होता है लकवा, लँगड़ापन, गूँगापन, पागलपन, अन्धापन, बहरापन और दौरे भी पड़ते हैं। कमज़ोरी आने लगती है।

जापान के निवासी ज़हरीले पारे का यह असर भुगत चुके हैं।

नदी कैसे मरती है?... धीरे-धीरे....

आप जानते हैं कि तालाब और नदी के पानी में ऑक्सीजन घुली रहती है जिसे पानी में रहने वाले जीव-जन्तु साँस द्वारा ग्रहण करते हैं। प्रकाश संश्लेषण (फोटोसिन्थेसिस) की क्रिया से पानी में उगने वाले पेड़-पौधे ऑक्सीजन छोड़ते हैं। इससे पानी में ऑक्सीजन की मात्रा बनी रहती है।

कारखाने जब मलबा-कचरा नदियों में बहा देते हैं तो क्या होता है? जब मलबा पानी में उतर जाता है तो सब नीचे चला जाता है और कुछ पानी में तैरता रहता है। पानी में कई तरह के जीवाणु रहते हैं जो इस कचरे को खा लेते हैं। कुछ जीवाणु पानी की ऊपरी सतह पर रहते हैं और कुछ निचली सतह वाले जीवाणु भी ऑक्सीजन लेते हैं। इनको एरोबिक बैक्टीरिया कहते हैं। कचरा खाने के बाद ये जीवाणु कचरे को अहानिकारक पदार्थों में बदल देते हैं। इस क्रिया में पानी की ऑक्सीजन खर्च होती है। फिर ये पदार्थ पेड़-पौधे तथा एलगी (शैवाल) प्रकाश संश्लेषण द्वारा ग्रहण करते हैं। इस प्रक्रिया में वे ऑक्सीजन छोड़ते हैं। इस तरह पानी में ऑक्सीजन की मात्रा बनी रहती है।

पर एक समय आता है जब पानी में कचरा हद से ज़्यादा हो जाता है। कचरे को बदलने में बहुत अधिक ऑक्सीजन खर्च होने लगती है। पानी में ऑक्सीजन की कमी होने लगती है। पानी में रहने वाले लाभदायक जीवाणु मरने लगते हैं। अब पानी की निचली सतह में रहने वाले जीवाणु कचरे पर वार करने लगते हैं। ये जीवाणु पानी से ऑक्सीजन ग्रहण नहीं करते हैं, इसलिए इनको एनेरोबिक बैक्टीरिया कहते हैं। ये जीवाणु कचरे में हाइड्रोजन छोड़ते हैं। यह हाइड्रोजन कचरे से उपलब्ध सल्फर के साथ मिलकर हाइड्रोजन सल्फाइड गैस पैदा करता है। यह गैस बहुत बदबूदार है। धीरे-धीरे पानी काला और गन्दा होने लगता है। सूरज की रोशनी इस कीचड़ से पानी को भेद नहीं पाती। रोशनी की कमी में पेड़-पौधों की प्रकाश संश्लेषण क्रिया बन्द हो जाती है। इससे ऑक्सीजन की मात्रा और कम हो जाती है। ऑक्सीजन की कमी से पेड़-पौधे, जीवाणु, मछलियाँ मरने लगते हैं। अन्त में बच जाती है एक गन्दी, बदबूदार नदी जिसमें ऑक्सीजन और जीव-जन्तु खत्म हो जाते हैं और जो भी उस पानी को हाथ लगाता है वह एक धीमी गति से दबोचने वाली मौत के हाथ लगता जाता है...।

ग्वालियर रेयॉन (केरल)

1958 में स्थापित। कारखाने से प्रतिवर्ष 680 लाख लीटर गन्दा पानी निकलकर चालियार नदी में मिलता था। इससे नदी का पानी काला पड़ गया। मवेशी मरने लगे। फसलें मुरझाने लगीं। पानी से लोगों को चमड़ी की और हवा से फेफड़ों की बीमारी होने लगी।

1963 के बाद लोग और सहन नहीं कर पाए। उन्होंने कारखाने पर धावा बोल दिया। मालिकों ने वादा किया कि कारखाने की गन्दगी को 20 किलोमीटर लम्बा पाइप बिछाकर समुद्र में छोड़ा जाएगा। यह व्यवस्था तीन साल में हो जाएगी।

मालिक वादा करके भूल गए। लोग फिर जुटे और लड़े। 1965 में ... 1967 में... 1968 में...

1968 में सरकार ने एक आयोग बिठाया। जिसने 1972 में अपनी रपट दी। आयोग ने कारखाने की गन्दगी को साफ करने के लिए संयंत्र लगाने की सिफारिश की। पर संयंत्र लगा नहीं।

1973 में लोगों ने फिर से आवाज़ उठाई। सरकार ने अब की बार एक जाँच कमेटी बैठाई। 1974 में केरल सरकार और जल प्रदूषण निगम ने जल प्रदूषण का एक कानून पास किया। सरकार और प्रबन्धकों के बीच एक समझौता हुआ कि गन्दगी को दूर छोड़ने के लिए 1.6 किलोमीटर लम्बा पाइप बिछाया जाएगा पर पाइप बिछा नहीं।

ओरियन्ट पेपर मिल (शहडोल)

1965 में स्थापित। कारखाने से निकलने वाला मलबा सोन नदी में मिलता है। इससे नदी का पानी 40 किलोमीटर दूर तक गन्दा होता है। इस गन्दे पानी को 30 से ज़्यादा गाँवों में उपयोग किया जाता है।

गन्दे पानी के उपयोग से सोन के किनारे पर होने वाली तरबूज की फसल लगना बन्द हो गई। मछलियाँ आधी रह गईं। इससे बहुत से लोग बेरोज़गार हो गए। हर साल हज़ार में से सत्तर मवेशी मरने लगे। पैदा होने वाली दूध की मात्रा भी 80 प्रतिशत तक घट गई। गायों की गर्भधारण करने की क्षमता पर भी प्रभाव पड़ा।

गन्दे पानी से गाँवों के लोगों के पैर फटना, नाखून टूटना और मुड़ना, पैरों में खुजली, चमड़ी में दाग, फोड़े-फुन्सी और दर्द की शिकायत रहने लगी। सोन नदी का पानी पीना तो दूर, नहाने धोने लायक नहीं रहा।

तंग आकर सन् 1970 में 26 गाँवों के कोई 300 लोगों ने मिलकर इसके खिलाफ आवाज़ उठाई। उन्होंने मिल मालिक, सरकारी अधिकारी, मंत्री तथा अन्य ज़िम्मेदार लोगों को पत्र लिखे। ज्ञापन दिए। नतीजा कुछ नहीं हुआ। आखिकार लोगों ने सोन पर बने बाँध को तोड़ने का निर्णय लिया।

पर मिल मालिक भी कम चालाक नहीं थे। उन्होंने आन्दोलन में शरीक लोगों को बहकाना शुरू किया।

1977 में केरल विधान सभा की एक कमेटी ने मामले की जाँच की। कमेटी के निष्कर्ष आश्चर्यजनक थे। पर मालिकों की मोटी खाल पर इन सबका कोई असर नहीं हुआ।

1978 की गर्मियों में कारखाना बन्द रहा। क्योंकि कुछ अन्य कारणों से मज़दूर हड़ताल पर थे।

कारखाना दोबारा चालू हुआ और फिर से कचरा नदी में फेंका जाने लगा। गुस्से में खौलते हज़ारों लोग जुटे और तोड़ आए वो बाँध जो कम्पनी ने नदी पर बनाया था अपने लिए। अब कम्पनी को सबक मिला और पलक झपकते बिछ गया वह पाइप जो 15 साल से नहीं बिछ रहा था।

पर बात बनी नहीं। नया पाइप बिछ तो गया, पर लीक करने लगा। खतरा अब भी टला नहीं था। लोग भभक उठे। कम्पनी वालों ने फिर वादे किए, तर्क दिए। पर लोग इस बार चक्कर में नहीं आए। कम्पनी के हर तर्क का वैज्ञानिक जवाब उनके पास था। पिछले चार सालों में कुछ वैज्ञानिकों की मदद से उन्होंने कारखाने का सारा विज्ञान समझ लिया था।

आखिरकार 1981 में प्रदूषण बोर्ड ने ग्वालियर रेयॉन के खिलाफ हाइकोर्ट में मुकदमा दायर कर दिया। हाईकोर्ट ने कम्पनी के खिलाफ कड़ी हिदायत जारी की। कम्पनी को झुकना पड़ा।

कुछ गाँवों के मुखिया प्रलोभन में आ गए। कुछ लोगों को कीर्तन का शौक था उन्हें कीर्तन का सामान -- मंजीरा, ढोलक, भजन की किताब आदि बाँट दी गई। हनुमान मन्दिर बनवाया गया।

कुछ गाँवों में कुएँ खुदवा दिए, किसी तालाब की सफाई करवा दी, कहीं नाले पर छोटा-सा बाँध बँधवा दिया।

धीरे-धीरे लोग टूट गए। आन्दोलन ठण्डा पड़ गया। और ओरियन्ट पेपर मिल चल रही है, लगातार धुँआ और ज़हर उगल रही हैं। सोन लगातार ज़हरीली हो रही है। लोग बीमार हो रहे है। उपजाऊ ज़मीन बंजर हो रही है। पशु मर रहे हैं। लोग पानी के लिए तरस रहे हैं।

ज़रूरत है कि
लोग तिल-तिलकर मरने के
खिलाफ फिर से जुटें,
पग-पग पर लड़ें-जूझें !!

मौत से जूझती एक नदी...

हम ज़हर खाते हैं

आन्ध्र प्रदेश में धान के खेतों में काम करने वाले मज़दूर केंकड़े खाते हैं। ये केंकड़े धान के खेतों में होते हैं। अचानक मज़दूर बीमार पड़ने लगे। खोजबीन से पता चला कि केंकड़े के मांस में कीटनाशक मौजूद था। यह वही कीटनाशक था जो किसानों ने अपने धान के खेतों में छिड़क दिया था।

केरल में करीब सौ लोग चावल खाने के बाद मर गए। उन्होंने चावल बाज़ार से खरीदा था। खोजबीन से पता चला कि भण्डारण के समय, चावल को सुरक्षित रखने के लिए, उस पर पेराथियॉन कीटनाशक छिड़का गया था।

यह केवल दो उदाहरण हैं। ऐसे दुनिया में सैकड़ों उदाहरण हैं। कीटनाशकों से हर साल पाँच लाख से अधिक लोग प्रभावित होते हैं। जिनमें से कम से कम 10-12 हज़ार मर जाते हैं।

ऐसा क्यों होता है? कारण यह है कि डी.डी.टी. जैसे अनेक कीटनाशक अपने ज़हरीले रूप में वर्षों तक बने रहते हैं और बदलते नहीं। एक अच्छा कीटनाशक तो वह है जो कीटों को खत्म करने के साथ-साथ जल्दी ही अहानिकारक पदार्थों में परिवर्तित हो जाता है। जो जल्दी नहीं बदलता, वह मिट्टी से पानी के साथ पौधों में पहुँच जाता है। जब गाय-भैंस इन पौधों को खाते हैं तो इसका

ज़हर दूध में चला जाता है। यह दूध पीने से ज़हर मनुष्य के शरीर में धीरे-धीरे जमा होता रहता है। मात्रा अधिक होने पर गम्भीर बीमारियाँ दबोच लेती हैं, जैसे सर चकराना, घबराहट, उल्टी, दस्त, सरदर्द, दौरे पड़ना आदि।

और भी कई तरीके हैं जिनसे कीटनाशक मनुष्य के शरीर में पहुँचते हैं। केरल के उदाहरण के अनुसार सीधा अनाज, या सब्ज़ी आदि खाने से ज़हर शरीर को नुकसान पहुँचाता है। कभी-कभी कीटनाशक सिंचाई के पानी में बहकर नदियों में पहुँचते हैं जिससे पानी में रहने वाले जीव-जन्तु पेड़-पौधे प्रभावित होते हैं। जैसे मछली के शरीर में ये कीटनाशक पहुँचकर जमा हो जाते हैं। जो बाद में मछली खाने वाले मनुष्य के शरीर में पहुँचते हैं। इसके अलावा छिड़काव के समय कीटनाशक साँस के साथ मनुष्य के शरीर में पहुँचते हैं। कभी-कभी कीटनाशकों को गलत ढंग से इस्तेमाल करने से हाथ-पैरों पर भी असर होता है।

• • • • •

ज़हर का चक्र

कीड़े किसी भी कीटनाशक के प्रति कुछ ही समय में प्रतिरोधक क्षमता प्राप्त कर लेते हैं, यानि उन पर ज़हर का असर होना बन्द हो जाता है। उनको मारने के लिए अधिक मात्रा और सान्द्रता में कीटनाशक छिड़कना पड़ता है। पर जब उसका भी असर नहीं होता तो अधिक ज़हरीली दवाइयाँ काम में लाते हैं। कुछ समय में कीड़े उनके भी आदी हो जाते हैं और तब ज़्यादा ज़हरीले पदार्थ बनाए जाते हैं। यह चक्कर चलता ही रहता है।

पिछड़े देशों में

विकसित देशों में इन कुप्रभावों के कारण कई कीटनाशक दवाइयों के उत्पादन पर प्रतिबन्ध लगाया गया है। जैसे डी.डी.टी., बी.एच.सी., डाइएल्ड्रिन, एन्ड्रिन, हेप्टाक्लॉर, 2, 4, 5, 1 आदि। उत्पादन बन्द होने से उद्योगपतियों को आर्थिक नुकसान होता है। इससे बचने के लिए कारखाने दूसरे देशों में बेच दिए जाते हैं जहाँ उन पर कानूनी बन्दिश नहीं होती। अक्सर गरीब, पिछड़े देश ही इस कार्यवाही का शिकार होते हैं। विकास के नाम पर गरीब देश इनको अपनाते जाते हैं। और अन्ततः नुकसान उठाते हैं। क्या आप जानते हैं कि हमारे देश के निवासियों के शरीर में डी.डी.टी की मात्रा दुनिया में सबसे अधिक है?

मौत का व्यापार

विदेशों में जानलेवा एसबेस्टॉस का उत्पादन लगातार कम किया जा रहा है। लेकिन भारतीय कम्पनियों में उत्पादन तेज़ी से बढ़ रहा है। भारत में एसबेस्टॉस बनाने वाली बीसों कम्पनियाँ किसी न किसी विदेशी कम्पनी से जुड़ी हुई हैं। भारतीय कम्पनियाँ विदेश से तकनीकी जानकारी तथा मशीनें मँगवाकर यहाँ के सस्ते और गरीब मज़दूरों की मेहनत से एसबेस्टॉस का सामान बनवाती हैं। यह माल वापस विदेशों में भेज दिया जाता है। इस तरह वहाँ माल भी मिल जाता है और बीमारी भी नहीं फैलती।

क्या आप जानते हैं?

हमारे देश का 70 प्रतिशत पानी प्रदूषित है!!!!

प्रदूषित बारिश

कारखाने चलाने के लिए तेल और कोयला जलता है। इससे निकली सल्फर डाइऑक्साइड गैस हवा की नमी से मिलकर सल्फ्यूरिक अम्ल बनाती है। यह अम्ल बादलों के साथ दूर-दूर उड़कर बारिश के साथ पृथ्वी पर पहुँचता है। और फसलें बर्बाद करता है। पैदावार घटने लग जाती है। लोगों में बीमारियाँ भी फैलने लगती हैं। इसके कई उदाहरण हैं। अमेरिका के शिकागो शहर में बहुत सारे कारखाने हैं। इन कारखानों से निकली सल्फर डाइऑक्साइड दूर कनाडा के खेतों में सल्फ्यूरिक अम्ल की बारिश के रूप में गिरता है। वैसे ही पश्चिम यूरोप की फैक्ट्रियों में यह धुँआ समुद्र पार करके नॉर्वे और फिनलैण्ड तक पहुँचता है। अब सोचिए, बम्बई के चेम्बूर इलाके की फैक्ट्रियों का धुँआ कहाँ-कहाँ तक पहुँचता होगा?

हिसाब-किताब

उद्योगपति कहते हैं, "बहुत ज़्यादा खर्चा पड़ता है।" क्या वाकई में?

- गोवा की जुआरी एग्रोकेमिकल्स को 27 लाख रुपए की लागत का मलबा सफाई संयंत्र लगाना पड़ा। 56 करोड़ की लागत के इस कारखाने के लिए क्या यह बहुत ज़्यादा है?
- ओरियन्ट पेपर मिल (अमलाई) को सफाई संयंत्र 12 लाख रुपए का पड़ेगा। हर साल 6 करोड़ रुपए मुनाफा कमाने वाले कारखाने के लिए क्या यह बहुत ज़्यादा है?

जन विज्ञान प्रदर्शनी

18 जनवरी से 25 जनवरी तक, होशंगाबाद में भोपाल गैस काण्ड पर आधारित जन विज्ञान प्रदर्शनी लगाई गई। इसी प्रदर्शनी पर यह पुस्तिका आधारित है। इस प्रदर्शनी को करीब 4000 लोगों ने देखा और कोई 125 लोगों ने रजिस्टर में अपने विचार दर्ज किए।

लोगों द्वारा लिखी गई कुछ टिप्पणियों के अंश हम यहाँ दे रहे हैं। भोपाल त्रासदी और औद्योगिक प्रदूषण को लेकर लोगों का दुख, चिन्ता और आक्रोश झलक पड़ता है। लोगों ने बहुत गम्भीरता और गहरी रुचि के साथ प्रदर्शनी देखी, पढ़ी।

आप से अनुरोध है कि आप चाहें तो इस पुस्तिका के आधार पर प्रदर्शनी हेतु पोस्टर बनवाएँ और अपने गाँव-शहर व उसके आसपास दिखाएँ।

"1984 की अन्तिम घड़ी में भोपालवासियों पर गैस की मार सिद्ध कर गई है कि हम अपने आस्तिनों में साँप पालते रहे हैं। निश्चय ही यह पूँजीपतियों की साज़िश रही है जिसे हम लोग अनदेखा करते आए हैं। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के ठेकेदारों ने मौत का ताण्डव रचा -- हो सकता है यह केवल पूर्व अभ्यास हो। मानव जीवन को कुछ ही क्षणों में किस प्रकार मौत की खाई में ढकेला जा सकता है, इसका पूर्व परीक्षण किया गया हो।"

हमारे कानून में जब एक आदमी का खून और उसकी मौत के लिए फाँसी का प्रावधान हो, तब जनता एवं कानून स्वयं फैसला कर सकते हैं कि हज़ारों लोगों की मौत के ज़िम्मेदार व्यक्तियों के लिए क्या सज़ा हो सकती है?

एक भुक्तभोगी भोपालवासी

"खूनी हिटलर के पश्चात निरीह एवं निर्दोष मनुष्य, पशु एवं प्रकृति की हत्या यूनियन कार्बाइड के द्वारा हुई। इसको जितने सटीक रूप से जनसाधारण को बताया एवं देश में प्रतिदिन पर्यावरण को दूषित कर रहे पूँजीपतियों के कल-कारखानों को बेनकाब किया यह एकलव्य का अनूठा प्रयास है। आशा है कि अब सभी सचेत हो जावेंगे। किसी भी रूप में कोई भी निर्दोष मानव एवं प्रकृति की हत्या नहीं कर पाए तो यह प्रयास सफल होगा।"

ए. जी. कुशवाह (होशंगाबाद)
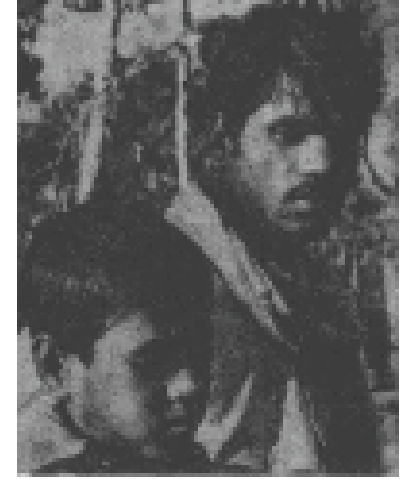
सुरेश (13)

मैं दूसरे लड़कों की तरह ज़्यादा देर तक नहीं खेल सकता। बहुत जल्दी ही मेरी साँस चढ़ जाती है।

सुखराम (50)

मैं 50 किलोग्राम का वज़न उठा सकता था। परन्तु ऐसा कौन मुसाफिर होगा जो इससे आधा वज़न उठाने के लिए कुली की तलाश करे?

रमेश कुमार

मैं और मेरी पत्नी बड़ी दुविधा में हैं। हमें अपने पहले बच्चे की बड़ी इच्छा है। (उसकी पत्नी गर्भवती है) परन्तु हमें शंका है कि हमारा होने वाला बालक सही सलामत होगा।

आदिल (4)

मुझे हौआ (भूत) दिखता है। मेरा दोस्त गब्बूस भी रात को हौआ देखता है। (आदिल को रात के समय दौरा सा पड़ता है और वह चीखने लगता है, "प्यारी बहन मुझे बचा लो, पापा मुझे बचा लो।")

"आज भोपाल ने हमारे भाइयों की जान ली पर कल हमारे यहाँ का उद्योग प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से हमारी न ले! ..... हम भविष्य को देखते हुए यह न सोचें कि यह घटना भोपाल की है हमें क्या लेना देना.....उद्योग से पैदा होने वाले दोषों को दूर करने हेतु सरकार पर और उद्योग प्रबन्ध पर दबाव दें।"

विनोद तिवारी (सतना)

"साम्राज्यवादी देश भारत जैसे गरीब मुल्क में घिनौने उद्योग खोलकर किस प्रकार आदमी की ज़िन्दगी के साथ मज़ाक कर रहे हैं। यह बात इस प्रदर्शनी के द्वारा सहज ही समझ में आ जाती है। मध्य प्रदेश शासन ने भी अपनी भूमिका सही ढंग से नहीं निबाही...."

एम.ए. लतीफ (म.प्र. तृतीय वर्ग शासकीय कर्मचारी संघ)

"इस तरह की भयंकर त्रासदियाँ जिसमें अधिकतर समाज का निम्न मध्य व निम्न वर्ग हर स्तर पर खत्म हो जाता है और सरकारी तंत्र उसके वर्गहित एवं साम्राज्यवादी एजेंसियाँ अपने ग्लेमर प्रचार तंत्र एवं भ्रम जालों से पीड़ित जनता का ध्यान त्रासदी की ओर से हटाने में जुट जाते हैं, तब इस तरह की प्रदर्शनियाँ लोगों के दिलोदिमाग में इस तरह की लादी हुई अमानवीय मौतों की याद ज़िन्दा रखती हैं...।"

अखिल पगारे (होशंगाबाद)

"देश में जहाँ भी इस तरह के कारखाने हैं वहाँ के स्थानीय निवासियों को उसमें प्रयुक्त होने वाले रसायनों व उनसे होने वाले सम्भावित खतरों की जानकारी होना चाहिए (मतलब सरकार को देनी चाहिए)......... सरकार चेत जाए तो ठीक है अन्यथा कोई और तरीका अपनाएँ (नागरिक लोग)"

संजय दुबे (होशंगाबाद)

"आओ बन्धुओं अब हम सब इस प्रकार के जानलेवा कारखानों का बहिष्कार करने की आवाज़ उठाएँ।"

दीपक (होशंगाबाद)

"यदि सरकार मुझे किसी प्रकार की सज़ा न दे तो भोपाल में स्थित यूनियन कार्बाइड कारखाने में आग लगा दूँ।"

सुन्दरनारायण शर्मा (होशंगाबाद)

"इस कारखाने को किसी जगह एक बड़ा गड्ढा खोदकर दफन कर देना चाहिए। इससे अच्छा और कोई रास्ता नहीं है।"

नरेन्द्र सिंह (होशंगाबाद)

"जहाँ तक भोपाल गैस त्रासदी का प्रश्न है निश्चय ही यह एक अमानवीय दुर्घटना है जिसकी जितनी अधिक निन्दा की जावे उतनी ही कम है। परन्तु इसके साथ-साथ प्रश्न यह है कि क्या विज्ञान के इस युग में जबकि हमें हमारे जीवन की सुविधाओं को प्राप्त करने में विज्ञान एवं उद्योगों का महत्वपूर्ण योगदान है, तब हमें कारखानों और उद्योगों की स्थापना से मुँह नहीं मोड़ना चाहिए। परन्तु इसके साथ हमें यह भी देखना होगा कि हमारी उन्नति हेतु इस प्रकार कारखाने स्थापित किए जाएँ कि कल को ये हमारी अवनति न करें और हमारे लिए प्राणलेवा न सिद्ध हों।"

टी.सी. चौहान (होशंगाबाद)

"ज़रूरत इस बात पर सख्त ध्यान देने की है कि कई उद्योग जो अभी भी धीरे-धीरे ज़हर को मनुष्य के शरीर में पहुँचाते रहते हैं उस समय तक तत्काल बन्द कर दिए जाएँ जब तक कि सुरक्षा के प्रति पूर्ण आश्वस्त न हो जावें। समय-समय पर कड़ी जाँच की जावे और फिर भी अव्यवस्था मिलने पर जाँचकर्त्ता के खिलाफ कड़ी कार्यवाही की जावे।"

राजकुमार गुप्ता (होशंगाबाद)

"इस प्रदर्शनी से यह निश्चित संकेत मिलता है कि यह दुर्घटना किंकर्त्तव्य विमूढ़ता का द्योतक है। जनता को राहत पहुँचाने हेतु उद्योगों के परिणाम से पूर्व परिचय और लक्षणों का पूर्वज्ञान आवश्यक है। यदि ऐसा नहीं तो इस प्रकार के घातक कारखानों को तुरन्त बन्द कर देना अनिवार्य है।"

एस.ए. अली
(होशंगाबाद)

"इस प्रकार के मुनाफा कमाने वाले औद्योगिक संस्थान जनसमाज से दूर बहुत दूर नितांत वीरान जंगलों में ही लगाना चाहिए।"

अखिलेश गुप्ता
(होशंगाबाद)

"अगर स्वतंत्र होने पर भी हम विकसित देशों के दबाव में आकर इस तरह की तबाही मोल ले सकते हैं तो स्वतंत्रता से बुरी और कोई चीज़ नहीं है।"

के.के.बी. (होशंगाबाद)

"भोपाल की गैस दुर्घटना से हम लोगों को भी भारी दुख है। ऐसा गैस किसी जंगल में ही बनवाया जावे जहाँ कि पचास किलामीटर तक आवास न हो।"

मेवाबाई

नहीं, नहीं, तुम मुझे अस्पताल मत ले जाओ। मृतकों के भूत चारों तरफ घूम रहे हैं।

सुनील (16)

लोग मेरे बड़े भाई को ढूँढ रहे हैं इस उम्मीद पर कि वे उसे एक दिन पा लेंगे। लेकिन यह आशा दिन-ब-दिन मरती जा रही है।

भोपाल गैस त्रासदीः मौजूदा स्थिति

स्वास्थ्य और उपचार

इण्डियन कौंसिल आफ मेडिकल रिसर्च का निष्कर्ष है कि करीबन 5,20,000 गैस प्रभावितों के खून में ज़हर बह रहा है जिसने उनके शरीर के लगभग प्रत्येक तंत्र को हानि पहुँचाई है। मोतियाबिन्द, भूख न लगना, अनियमित मासिक धर्म, बार-बार बुखार आना, थकान, कमज़ोरी, व्यग्रता एवं तनाव सामान्य लक्षण हैं।

परन्तु यूनियन कार्बाइड रिसी गैसों के मिश्रण व शरीर पर पड़ने वाले उनके प्रभावों की जानकारी लगातार गुप्त रखे हुए है। वह इनको अपना “ट्रेड सीक्रेट” मानती है।

गैस पीड़ितों में फैफड़े की टी.बी. राष्ट्रीय औसत से तीन गुना अधिक है। साँस की परेशानी और जानलेवा कैन्सर भी सामान्य आबादी के अनुपात से अधिक है। विभिन्न प्रकार के ट्युमर तथा साँस के मरीज़ों की संख्या चिन्ताजनक रूप से अधिक है और दिनोंदिन बढ़ रही है।

जानकारी के अभाव में भोपाल के डॉक्टर आज भी गैस सम्बन्धी बीमारियों के इलाज के बारे में कुछ नहीं जानते।

यूनियन कार्बाइड द्वारा स्थापित भोपाल मेमोरियल हॉस्पिटल ट्रस्ट भी इलाज के बारे में उतना ही अनजान है।

चिकित्सालयों, औषधालयों में आवश्यक दवाओं, जाँच उपकरण व विशेषज्ञों का अभाव निरन्तर बना हुआ है।

सन् 2000 में भोपाल मेमोरियल अस्पताल आंशिक रूप से आरम्भ हुआ। परन्तु आज तक वह अपनी घोषित क्षमताओं के अनुरूप काम नहीं कर रहा है। अब तक किडनी, ट्रायप्लांट, नाक कान गला आदि विभाग आरम्भ नहीं हुए हैं।

आज तक सभी प्रभावितों के पहचान कार्ड नहीं बन पाए हैं। 5 लाख से अधिक गैस पीड़ितों में से लगभग 3.75 लाख पीड़ितों के स्मार्ट कार्ड (पहचान पत्र) बने हैं।

पर्यावरण और प्रदूषण

कार्बाइड मैनेजमेंट द्वारा विषैले अपशिष्ट पदार्थों को साइट पर छोड़ देने के कारण फैक्टरी के आसपास के लोगों को इन ज़हरीले पदार्थों से दूषित पानी पीने को मजबूर होना पड़ रहा है। यूनियन कार्बाइड द्वारा प्रायोजित एक अप्रकाशित अध्ययन में इस बात की पुष्टि हुई है कि फैक्टरी परिसर की ज़मीन में स्थायी कार्बनिक प्रदूषण मौजूद है, जिनमें से दो कैन्सरकारक हैं।

कम्पनी प्रबन्धन ने जुलाई 1998 में यूनियन कार्बाइड के भोपाल संयंत्र को सरकार को सौंप ज़मीन में दबे हुए रासायनिक कचरे के ढेर को सरकार की देखभाल के लिए छोड़ दिया।

नगर निगम ने 50 से अधिक नलकूपों के पानी को पीने के लिए अनुपयुक्त घोषित किया है।

सिटी एन्वायरमेंट लैब (बॉस्टन, यूएसए), लोक स्वास्थ्य यांत्रिकी विभाग, मध्य प्रदेश शासन, ग्रीनपीस, भोज वेटलेण्ड, प्रदूषण निवारण मण्डल, पीपुल्स साइंस इंस्टीट्यूट (देहरादून) तथा बीबीसी ने भी अपनी रिपोर्टों में यूनियन कार्बाइड संयंत्रों के आसपास की बस्तियों के जल स्त्रोतों को प्रदूषित बताते हुए बस्तियों में शुद्ध जल मुहैया कराने की सिफारिश की है।

कार्बाइड प्रबन्धन ने लगातार ज़हरीले कचरे को वैज्ञानिक पद्धति से नष्ट करने की बजाय ज़मीन में डालने का सस्ता तरीका अपनाया था। दूषित सामग्री गोदामों में भी जमा है। नतीजतन परिसर में सतह तथा ज़मींदोज़ रसायनों का अनुमानित वज़न 8 हज़ार मीट्रिक टन होगा। (लगभग इतना ही दूषित कचरा संयंत्र के बाहर छोला दशहरा मैदान के समीप सोलार इवेपोरेशन साइट पर पड़ा है)।

गैस पीड़ितों को शुद्ध पेय जल मुहैया कराने के लिए 1997 में केन्द्र द्वारा 3 करोड़ तथा 2007 में जवाहरलाल नेहरू शहरी विकास योजना के तहत 14.50 करोड़ की राशि दिए जाने के बाद भी, अटल-अय्यूब नगर, आरिफ नगर, न्यू आरिफ नगर, कैंची छोला, दशहरा मैदान, अन्नू नगर, चाँदबड़, गरीब नगर, नवाब कॉलोनी आदि में पेय जल की समूचित व्यवस्था नहीं है। 8 हज़ार से अधिक परिवार प्रदूषित जल पीने को विवश हैं।

रोज़गार

आज गैस जनित रोगों से प्रभावित ऐसे लगभग 1 लाख लोग हैं, जिन्हें उनकी घटी हुई क्षमता अनुसार रोज़गार की आवश्यकता है।

सरकारी कार्यक्रमों में सिर्फ 80 महिलाओं को रोज़गार मिला है।

स्टेशनरी उत्पादन केन्द्र में दिए गए रोज़गार 22 वर्षों पश्चात भी नियमित नहीं हो पाए हैं।

1986 में सरकार द्वारा शुरू किए गए व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रम के अन्तर्गत पिछले 20 सालों में मात्र 9 हज़ार गैस पीड़ितों को प्रशिक्षण दिया गया है।

11 करोड़ की लागत से एक औद्योगिक प्रशिक्षण संस्था (आई.टी.आई) स्थापित की गई है। अप्रैल 05 में उसे भी तकनीकी शिक्षा विभाग को सौंप दिया गया जिससे प्रशिक्षण कार्यक्रम लगभग समाप्त हो गया है।

सरकार ने 27 स्थानीय स्वयंसेवी संस्थाओं को प्रशिक्षण व उत्पादन केन्द्र चलाने की ज़िम्मेदारी दी थी। लेकिन 2008 तक इनमें से दस को छोड़कर कोई भी संस्था रोज़गारोन्मुखी कार्यक्रम नहीं चला रहा है।

1998 में जूट हस्तशिल्प का उत्पादन शुरू किया गया था जिसमें 13 महीने तक 400 महिलाओं को रोज़गार मिला। परन्तु उत्पादित वस्तुओं के लिए बाज़ार न होने के कारण 16 मार्च 1999 को यह योजना समाप्त कर दी गई।

गैस विधवाओं की स्थिति

विधवाओं को बेहतर पर्यावरण देने के उद्देश्य से करोंद कॉलोनी में 2490 आवासों का निर्माण किया गया। किन्तु यहाँ स्थितियाँ किसी कच्ची बस्ती की तरह ही हैं। यहाँ 2000 से अधिक परिवार नारकीय जीवन जी रहे हैं।

1100 से अधिक गैस विधवाएँ निराश्रित हैं। आज न तो उन्हें रोटी मयस्सर है, न ही घर-पहुँच इलाज। ऊपर से हर महीने बिजली, पानी के नोटिस उन तक पहुँच रहे हैं।

कई विधवाएँ भिक्षावृत्ति कर जीवन यापन कर रही हैं। उनकी आजीविका पेन्शन की माँग को अब तक नहीं माना गया है।

एक गैस पीड़ित के जीवन का मूल्य

गैस त्रासदी में अनुमानतया अब तक 35 हज़ार से अधिक प्रभावित नागरिकों की मृत्यु हुई है।

शुरू में भारत सरकार ने पीड़ितों की ओर से त्रासदी की क्षतिपूर्ति के लिए करीब तीन अरब डॉलर (3900 करोड़ रुपये) का दावा किया था। परन्तु सरकार ने कम्पनी से साँठ-गाँठ कर गैस पीड़ितों से पूछे बिना 470 मिलियन डॉलर (715 करोड़ रुपये) पर समझौता कर लिया। इसके कारण यूनियन कार्बाइड कम्पनी को मात्र 50 सेंट प्रति शेयर का नुकसान हुआ है।

सरकारी आँकड़ों के अनुसार भोपाल में 10,01,723 दावे विकारों के और 22,146 मृत्युओं के दावे दर्ज किए गए थे। जिन लोगों को मुआवज़ा मिला है, उनमें से 99 प्रतिशत को विकारों के लिए 25 हज़ार व मृत्यु के लिए एक लाख से कम की राशि प्राप्त हुई है। इस मुआवज़ा राशि में से भी सरकार द्वारा दी गई अन्तरिम राहत राशि काट ली गई है। बाकी बचा पैसा उन लोगों के पाँच साल के इलाज तक के लिए काफी नहीं है, जो सम्भवतः ताउम्र बीमार रहेंगे।

मानसिक क्षति के लिए कोई मुआवज़ा नहीं दिया गया है।

14/15 फरवरी 1989 को भारत सरकार तथा यूनियन कार्बाइड के बीच हुए समझौते के समय घायलों की संख्या 1,02,000 तथा मृत्यु मात्र 3000 बताई गई थी। किन्तु अब तक गैस अदालतों ने जिन पीड़ितों को मुआवज़ा दिया है वह संख्या 5,73,000 घायल तथा 15,274 मृत्यु प्रकरण है। अर्थात समझौते के समय की संख्या से पाँच गुना अधिक।

आपराधिक अभियोग

3 दिसम्बर 1984 को स्थानीय हनुमानगंज पुलिस थाने में लापरवाही से हुई मृत्युओं व अन्य गम्भीर अभियोगों के लिए प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज कराई गई थी।

1 दिसम्बर 1987 को केन्द्रीय जाँच ब्यूरो (सीबीआई) ने यूनियन कार्बाइड कॉर्पोरेशन, उसकी एशियाई सहायक कम्पनी यूनियन कार्बाइड ईस्टर्न (हांगकांग) व भारतीय सहायक कम्पनी यूनियन कार्बाइड इण्डिया लिमिटेड के विरुद्ध भोपाल ज़िला न्यायालय में अभियोग पत्र प्रस्तुत किया। इसमें तत्कालीन कम्पनी अध्यक्ष वॉरेन एंडरसन समेत कम्पनी के नौ अधिकारियों को भी अभियुक्त बनाया गया था।

इन बारह दोषियों की भारतीय दण्ड संहिता की धारा 304 (भाग2), 326, 324, व 429 के तहत नर-संहार व जानवरों को ज़हर देने जैसे कई संगीन अपराधों के लिए दोषी बनाया गया। सीबीआई ने फैक्टरी कर्मचारियों के साथ मिलकर एक दमदार प्रकरण बनाया, जिसमें प्रमुख प्रबन्धकीय निर्णयों को दुर्घटना के साथ जोड़ा गया।

27 मार्च 1992 को मुख्य न्यायिक दण्डाधिकारी, भोपाल ने वॉरेन एंडरसन को फरार घोषित कर उनका गिरफ्तारी वारंट जारी किया। 16 साल से भी अधिक समय बीत गया है परन्तु भारत सरकार विदेशी अभियुक्तों के प्रत्यावर्तन के लिए अभी तक एक भी कदम नहीं उठा पाई है।

वर्तमान में दुर्घटना के भारतीय अभियुक्तों के खिलाफ मुकदमा भोपाल के मुख्य न्यायिक दण्डाधिकारी की अदालत में चल रहा है। मुकदमे की प्रगति बहुत धीमी है, महीने में एक से भी कम सुनवाई हो रही है।

22 जुलाई 09 को सीजेएम भोपाल ने पुनः सी.बी.आई. के मार्फत वॉरेन एंडरसन के विरुद्ध गिरफ्तारी वारंट भेजे हैं।

अभियोजन संस्थाओं की ढिलाई के कारण भारतीय अभियुक्तों को अभी तक दण्ड नहीं मिल पाया। वहीं दूसरी ओर बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के लिए अन्तराष्ट्रीय कानून, न्यायिक व्यवस्था एवं कार्यपालक ढाँचे के पूर्ण अभाव में दोषी कम्पनी ने इस हत्याकाण्ड की जवाबदेही से अपना पल्ला छुड़ा लिया है।

कार्बाइड - डाव केमिकल्स का विलय

4 अगस्त 1999 को डाव केमिकल्स के मुख्य कार्यकारी अधिकारी विलियम एफ. स्टाव्रोपाउलो ने यूनियन कार्बाइड में अपनी कम्पनी के विलय की घोषणा की तथा फरवरी 2000 में यह विलय हो गया है। इस विलय के फलस्वरूप यूनियन कार्बाइड दुनिया की दूसरी सबसे बड़ी रासायनिक कम्पनी बन गई है।

ये दोनों कम्पनियाँ कई सालों से 'मिलिटरी इंडस्ट्रियल काम्पलेक्स' का हिस्सा रही हैं। वियतनाम में एजेंट ऑरेंज द्वारा हज़ारों लोगों की मानसिक व जन्मजात विकृतियों में डाव केमिकल्स की भूमिका सर्वविदित है।

भूलने के खिलाफ याद रखने की लड़ाई

लोगों को लाभ दिखाने वाली कम्पनियों के खतरनाक परिणाम बताने के लिए ऐसी औद्योगिक इकाईयों को त्रासदी की याद दिलाने के लिए एक स्मारक के रूप में सुरक्षित रखा जाना चाहिए। किन्तु यह शर्मनाक है कि राज्य सरकार ने अपने स्मारक निर्माण के घोषित वायदे को भी अब तक नहीं निभाया है।

भोपाल गैस पीड़ित महिला उद्योग संगठन द्वारा जारी पर्चे पर आधारित।

ISBN: 978-81-89976-63-7

मूल्य: 35.00 रुपए

ISBN: 978-81-89976-63-7

मूल्य: 35.00 रुपए